अध्याय तीन

अमरकांत की कहानियों का राजनीतिक संदर्भ

अध्याय तीन
अमरकांत की कहानियों का राजनीतिक संदर्भ

स्वतंत्रता के बाद भारत की अपनी राजनीति का गठन हुआ। नयी सरकार के प्रति जनता की इतनी उम्मीद थी कि वह एक स्वस्थ जीवन का सपना देख रही थी। लेकिन बात ऐसी हुई थी कि अधिकार प्राप्त होते ही राजनीतिज्ञों का रंग बदलने लगा। पद और अर्थ की लालसा ने राजनेताओं के बीच ऐसे एक वर्ग को जन्म दिया जो अपने कुटिल बुद्धि से दूसरों को किनारा करते हुए अपना रास्ता बनाने में माहिर था। इस वर्ग ने स्वाधीन भारत की राजनीतिक व्यवस्था को तहस नहस कर दिया। देश भर में राजनीतिक अस्थिरता छा गई। प्रस्तुत अध्याय में अमरकांत की कहानियों में रेखांकित इन राजनीतिक विसंगतियों की तलाश हुई है।

3.1 राजनीति : अवधारणा

'राजनीति' शब्द वस्तुतः अंग्रेज़ी के 'पोलिटिक्स' शब्द का हिन्दी अनुवाद है। 'पोलिटिक्स' शब्द की व्युत्पत्ति यूनान के पोलिस से हुई है जिसका हिन्दी अनुवाद 'नगर-राज्य' या 'नगर-समुद्र' माना जा सकता है।

'राजनीति' का तात्पर्य राज्य व्यवस्था के संचालन के लिए बनाए गए विधि विधान से है। नीति शब्द मंगलकारी मूल्यों का बोधक है। ज्योतिरीश्वर मिश्र के

शब्दों में "प्राचीन भारत में 'राजनीति' के लिए 'राजधर्म' शब्द का भी प्रयोग होता रहा। 'राजनीति' या 'राजधर्म' को 'लोकधर्म' का पर्याय मानते हुए भारतीय मनीषियों ने मानवीय बौद्धिक एवं नैतिक धरातल पर कल्याणकारी राज्य की आधारशिला रखी थी।"[1]

'राजनीति' शब्द को सम्यक रूप से परिभाषित करना जटिल कार्य है। आज सबकी अपनी-अपनी राजनीति है। दुनिया राजनीति की धुरी पर चलती है। राजनीति के स्वरूप को व्यक्त करते हुए पिनाक एवं स्मिथ ने इसकी परिभाषा दी है - "राजनीति उन समस्त शक्तियों से संबन्धित है जो राज्य के शासन, उसकी नीतियों तथा कार्यों को संघप्ति करती एवं गढती है। इस तरह राजनीति किसी समाज में सुव्यवस्था साधारण और स्थापना, उसके सदस्यों के सहमागित प्रयोजनों को कार्यान्वित तथा उनके मतभेदों का समाधान करने के लिए उस समाज में अन्तर्भावी तथा अंतिम सत्ता माने जाते हो।"[1] ओक्सफार्ड अंग्रेजी शब्दकोश में राजनीति की परिभाषा इस प्रकार दी है - The activities involved in getting and using power in public life, and being able to influence decisions that affect a country or a society"[2] केन्नत एम डोलबेयर के शब्दों में "Politics is activity that has to do with the acquisition and usage of power in such a manner as to affect the nature and behavior of gov-

---

1. ज्योतिरीश्वर मिश्र, स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी नाटक, मूल्य संक्रमण, पृ. 79
2. पिनाक एवं स्मिथ, पोलिटिकल सायन्स, इंड्रोडक्शन, पृ. 91
3. आक्सफार्ड अंग्रेज़ी शब्द कोश

ernment... politics necessarily involves ethical choices, societal relationship, environmental conditions and introduction among such factors."[1] जितेन्द्र वत्स के शब्दों में "राजनीति से तात्पर्य उस शास्त्र से है जो राज्य संचालन संबन्धी नीतियों का अध्ययन प्रस्तुत करता है। यह विशेषतः संविधान से सम्बद्ध होता है जिसे किसी देश का संचालन कार्य उसके जीवन में व्यवहार रूप में परिणत करने का भरसक प्रयत्न करता है।"[2] इन परिभाषाओं को ध्यान में रखते हुए कह सकते हैं कि राजनीति सत्ता को अपनाने के लिए करनेवाली प्रयत्न शील गतिविधि है जिसमें हमेशा व्यक्ति या व्यक्ति समूह का संघर्ष एवं सहयोग विद्यमान है।

3.2 स्वातंत्र्योत्तर भारतीय राजनीति

स्वतंत्रता के बाद भारतीय राजनीति में बहुत सारे बदलाव आ गए। नई सरकार ने शासन का कार्यभार संभाला। लोकतंत्र व्यवस्था में जो पूरी दुनिया के लिए लोकप्रिय थी, नई सरकार ने भारत में अनुशासन लाने की कोशिश की। लेकिन पूरी दुनिया के लिए लोकप्रिय यह लोकतांत्रिक राजनीति की कुछ कमियाँ भी थी जिसको इस व्यवस्था का दोष नहीं कहा जा सकता, बल्कि व्यवस्था के कर्णधर जो है, उनका दोष था। "पूरी दुनिया में लोकतांत्रिक राजनीति के लोकप्रिय होने के साथ-साथ इसमें दो विपरीत खास बातें थीं। पहली एक सुनहरे भविष्य की

---

1. Kenneth M. dolbeare, Direction in American political thought, P. 3
2. जितेन्द्र वत्स, साठोत्तरी हिन्दी कहानी में राजनीतिक चेतना, पृ. 17

उम्मीद जगाती थी, आर्थिक समृद्धि और सामाजिक अमन चैन की आकांक्षा पैदा करती थी, जबकि दूसरी बात भय पैदा करती थी।"[1] लेकिन लोकतांत्रिक व्यवस्था ने जनता में जो आकांक्षा पैदा की थी उसका अधिक समय तक आयू नहीं थी। उनके सपनों में तुषारपात हुआ। भारतीय राजनीति की प्रारंभिक दशा को व्यक्त करते हुए नरेन्द्र मोहन कहते हैं - "राजनीति का अपना एक उद्देश्य है और वह है समाज व व्यक्ति, दोनों का एक समन्वित व्यापक हित। संविधान सभा के माध्यम से भारत के नागरिकों ने यह संकल्प लिया था कि यह राष्ट्र एक लोकतांत्रिक गणराज्य बनेगा, ताकि देश के हर नागरिक को अपने सर्वांगीण विकास का अवसर मिल सके और न उसका कोई शोषण करे और न उसके द्वारा किसी का भी शोषण किया जा सके"[2] लेकिन स्थिति दूसरी थी। सत्ता पर आसीन धनलोलुप राजनीतिज्ञों ने समाज में अराजकता पैदा की। भ्रष्टाचार फैल गया। चारों और अव्यवस्था छा गयी।

देश में सत्ता हडपने के षड्यंत्र व्यापक हो गए। जाति, धर्म, संप्रदाय, वर्ण आदि के नाम पर जनता को भटकाने लगे। देश के पिछडे वर्ग पिछडे होते चले गए और धनिक और अधिक सुख लोलुपता से ज़िंदगी बिताने लगे। जनता की चेतना को खंडित करते हुए ये अधिकारी वर्ग अपना उल्लू सीधा करते हैं। चित्रा मुद्गल के शब्दों में "उसकी चेतना को जाति, बिरादरी, संप्रदाय, धर्म आदि के नाम पर पहले से ही खंडित और विभाजित किया जा चुका है। रही-सही कसर अराजकता

---

1. रामचंद्र गुहा, भारत गाँधी के बाद, पृ. 35
2. नरेन्द्र मोहन, आज की राजनीति और भ्रष्टाचार, पृ. 24

पूरी कर रही है। दृष्टव्य है कि लोकतंत्र में लोक विकल्पहीनता की स्थिति में पहुँच रहा है। ....भले उसे उस समझ से वंचित रखे किमतदाताओं को जातीय समीकरण से जोडकर रखने और देखने की साजिश और उसके अधिकारों की लडाई नहीं है। न बहाली। न विकास। न वर्गभेद से मुक्ति देने का उपाय, बल्कि बडी चालाकी से जाति और धर्म की आड़ में अपना उल्लू सीधा करने और स्वयं को राजा या रानी बनने के सपनों को पूरा करने को यह लोकतंत्रीय छद्मवाद मतदाताओं को आत्मघाती बना रहा है।"[1] इस प्रकार देखे तो भारतीय राजनीति अब मुश्किल की कडियाँ गिन रही है। आज वह इतने संकट में है कि वहाँ से उसका उद्धार मुश्किल है। चित्रा मुद्गल के अनुसार "मुश्किलें भयानक रूप धरती जा रही हैं। राज्य-स्तर पर मजबूत नेतृत्व का अभाव, सर्वमान्य उजली छवी की अनुपस्थिति इस बात की ओर संकेत कर रही है कि भविष्य में देश की राजनीति गहरे संकट से दो-चार होने के कगार पर खडी हुई है।"[2] वास्तव में एक अच्छे नेतृत्व के अभाव और शासन व्यवस्था में व्याप्त भ्रष्टाचार ने भारतीय राजनीति का सत्यानाश कर रखा है।

अमरकांत स्वाधीन भारतीय राजनीति के उत्थान-पतन का भुक्तभोगी है। इसलिए उन्होंने अपनी कहानियों में राजनीति में व्याप्त भ्रष्टाचार, अराजकता, व्यवस्था के खोखलेपन आदि का जीता जागता वर्णन किया है। आगे अमरकांत जी की कहानियों में प्रतिफलित इन बातों पर विस्तार से विचार किया जाएगा।

---

1. चित्रा मुद्गल, बयार उनकी मुट्ठी में, पृ. 55
2. वही, पृ. 55

3.3 राजनीतिज्ञों से मोहभंग

स्वाधीन भारत की जनता के लिए सबसे बडी परेशानी यह थी कि अपने देश में उसने जिन सुख-सुविधाओं और आकांक्षाओं का सपना देखा था, वह मिट्टी में मिल गया। सबसे बडा धोखा उन्हें राजनीतिज्ञों से खानी पडी जिन पर वह विश्वास कर बैठी थी। अमरकांत ने जनता के इसी मोहभंग को अपनी कहानियों में बखूबी उकेरा है।

'कुहासा', 'फूलरानी', 'बस्ती' आदि कहानियाँ राजनीतिज्ञों से हुए मोहभंग की दस्तावेज़ है। 'कुहासा' कहानी में ज़िंदगी की विपरीत परिस्थितियों से तंग आकर चमारटोली का लडका दूबर वहाँ से भागकर शहर आ जाता है। शहर में आकर उसकी ज़िंदगी बदल जाता है। रामचरन नामक राजनीतिक नेता उसे चुनाव प्रचार के लिए ले जाता है। उस गरीब लाचार लडके को कई वादे देता है। छोटे-मोटे काम करते हुए शहर में ज़िंदगी गुज़ारनेवाले उस बेचारे लडके के पास आकर रामचरण कहता है - "दो दिनों के लिए यह घटिया काम छोड दो और मेरे साथ चलो, पाँच-पाँच रुपये रोज़ दिलवाऊँगा तुम लोगों को। साथ में पूडी-जिलेबी का नाश्ता। चाय चाहे जितनी पीयो। चौक में और आस-पास की गलियों में जुलूस बनाकर घूमना होगा, नारे लगाने होंगे। घबराते क्यों हो बच्चू, तुम लोगों का तो ज़माना आ रहा है। सरकार तुम्हारी ही बननेवाली है। अगर तुमने काम अच्छा किया और चुनाव में जीत हो गयी तो तुम में से हर आदमी को एक-एक रिक्शा और एक-एक मकान दिलवा दूँगा....."[1] बेचारा दूबर रिक्शा और मकान के सपने

---

1. अमरकांत, कुहासा, अमरकांत की संपूर्ण कहानियाँ, पृ. 19

में डूबता रहा। उसने सोचा कि रिक्शा और मकान के मिलने पर खूब पैसे कमाएगा। माँ-बाप और भाई-बहनों को अपने पास बुलाकर उन लोगों की देखभाल करेगा और खुशी-खुशी जिएगा। लेकिन उसके सपने मिट्टी में मिल गए। इतना ही नहीं म्युनिस्पैलिटी वालों ने जो कंबल उसको दिया था, वह भी उससे छीन लिया गया। राजनीतिक स्वार्थ के लिए निरीह लोगों के शोषण करनेवाले राजनीतिक नेताओं का प्रतीक है रामचरण। करनी और कथनी में अंतर दिखानेवाले इन राजनीतिज्ञों से स्वातंत्र्योत्तर भारत में जनता कई प्रकार से मोहभंग के शिकार हुए।

'फुलरानी' एक वेश्या की ज़िंदगी का बयान करनेवाली कहानी है। स्वतंत्रता के पहले वेश्यावृत्ति के द्वारा स्वस्थ जीवन बितानेवाली एक वेश्या के जीवन में स्वतंत्रता के बाद आनेवाले बदलावों की ओर कहानी इशारा करती है। स्वतंत्रता के बाद प्रगति और विकास के नाम पर जिन योजनाओं को लागू किया गया, उनसे फुलरानी को मजबूरन अपना धंधा छोडना पडता है। स्वतंत्रता के बाद आई सरकार ने भारतीय जनता को कई वादे दिए। उन लोगों ने सोचा कि इन वादों के पूरे होते ही बेशक ज़िंदगी बदल जाएगी। लेकिन ऐसा नहीं हुआ। लोगों के बीच खुशखबरी तेजी से फैली कि सबको एक-एक घर मिलेगा, सिलाई की मशीन मिलेगी, कढ़ाई-बुनाई सीखने-सिखाने का पक्का इन्तज़ाम होगा, उनकी सन्तान की शिक्षा की पूरी व्यवस्था होगी और इस पेशे को छोड़कर समाज की मुख्य धारा में शामिल होने और सम्मानजनक स्वावलंबन के लिए मासिक आर्थिक सहायता भी प्राप्त होगी। लेकिन फुलरानी की हालत तो दूसरी थी। अमरकांत जी कहते हैं - "फुलरानी ने भी इस नयी परिस्थिति में अपने लिए और अपनी संतान के लिए बहुत कुछ सोचा

तथा सुन्दर सपने देखे। परंतु इंतज़ार में आँखें पथरा गयी, दिल डूबने लगा और जो कुछ हुआ, उससे एक आधा-अधूरा प्रतिबन्ध लग गया, जिसके नीचे छद्म और नाटक चलने लगा।"[1] इस प्रकार जो वादे हुए वे वादे मात्र रह गए।

मोहभंग की इसी अवस्था को 'बस्ती' नामक कहानी में दूसरे ढंग से अमरकांत ने प्रस्तुत किया है। इसमें अमरकांत ने एक बस्ती की कहानी के द्वारा परोक्ष रूप से पूरे भारत की कथा कही है। दो साल के असीम संघर्ष और आन्दोलन के द्वारा बस्ती के लोग उस बस्ती को अपना बनाते हैं और मकान मालिक की क्रूर प्रताडनाओं से बचते हैं तथा गुलामी की ज़िंदगी से मुक्ति पाते हैं। रामलाल के नेतृत्व में आत्मानन्द और बांकेलाल मिलकर आँदोलन चलाया था और सफलता पाई थी। लोग खुशी-खुशी जीने लगे। लेकिन वह खुशी कई दिनों तक नहीं रुकी। एक दिन लोगों ने देखा कि दक्षिण के इलाके में गली की बहुत-सी ईंटें गायब हैं। चारों ओर तहलका मच गया। जिस गली को लोग इतना प्यार करते थे और जिसको अपने पवित्र आदर्श की तरह रक्षा करते थे उसकी यह बरबादी उनको बर्दाश्त नहीं हुई। रामलाल ने लोगों को आश्वासन दिया कि वह समस्या को सुलझाएगा और सब कुछ ठीक करेगा।

स्थिति बिगडती गयी। एक दिन बॉकेलाल आत्मानन्द से कहता है कि रामचन्द्र तिवारी रात में पेशाब करने उठा था तो उसने देखा कि रामलाल, उसकी बीबी और लडके सभी ईंटे ढोकर घर ले जा रहे हैं। यह सुनकर आत्मानन्द सुन्न रह

---

1. अमरकांत, फुलरानी, अमरकांत की संपूर्ण कहानियाँ खंड-2, पृ. 292

गया। गली की ईंटें उखडती रहती थी। एक दिन रात को आत्मानन्द ने खट-खट की आवाज़ सुना उसने देखा कि कुछ लोग मिलकर गली की ईंटें उखाडकर ले जा रहे हैं। उसने उसमें से एक आदमी का चेहरा पहचाना। वह बॉकेलाल था। अमरकांत कहते हैं - "आत्मानंद निराशा की अनन्त गहराई से लुढ़कता गया। उसको अत्यधिक शर्म, अपमान और तुच्छता का अनुभव हो रहा था। उसके दिल के जैसे असंख्य टुकडे कर दिये गये हों। क्या दुनिया ऐसी है? क्या विश्वास का यही फल मिलता है?" सब कुछ जानकर भी आत्मानंन्द कुछ नहीं कर सका।

कहानी में बस्ती स्वतंत्र भारत का प्रतीक है। बस्ती की ईंटें उखडने का मतलब भारत की व्यवस्था के भ्रष्ट होने से और बिगडने से है। बॉकेलाल और रामलाल यहाँ के भ्रष्ट राजनीतिज्ञ है जिन्होंने भारत की व्यवस्था को भ्रष्ट बनाया था और जनता को अपने सपने से वंचित कराया था। आत्मानंद उस निरीह जनता का प्रतीक है जो स्वातंत्र्योत्तर भारत में मोहभंग की शिकार बनी थी। स्वतंत्र भारत की आम जनता की भी यही स्थिति है वह अपनी इस हालत के ज़िम्मेदार को जानती है लेकिन चुप रहने के लिए विवश है। और उन्हें हमेशा इस प्रकार के मोहभंग और भ्रष्टता का शिकार होना भी पडता है।

3.4 राजनीतिक भ्रष्टाचार एवं शोषण

अंग्रेज़ों के चले जाने के बाद स्वाधीन भारत की अपनी राजनीति गठित हुई। यहाँ लोकतांत्रिक व्यवस्था की स्थापना हुई। यानी जनता की अपनी शासन

---

1. अमरकांत, बस्ती, अमरकांत की संपूर्ण कहानियाँ खंड 1, पृ. 392

व्यवस्था स्थापित हुई। जनतंत्र या लोकतंत्र का अर्थ अब्राहम लिंकन के शब्दों में उस प्रकार की सरकार से होता है जो सरकार जनता द्वारा, जनता का और जनता के लिए हो। लेकिन यह शाब्दिक अर्थ केवल कागज़ों में लिखित रूप में बंद पडा रहा। भारतीय जनता हमेशा सुव्यवस्थित शासन से वंचित रही। अधिकार के मादक सुख ने सत्ताधीशों को धनलोलुप और स्वार्थी बना दिया। नेताओं के बीच के गढबंधन टूट गए और आपस में अधिकार के लिए होड़ मच गयी। छल, कपट और संकीर्ण स्वार्थों ने राजनीतिज्ञों को अंधा बना दिया। भ्रष्टाचार पनपने लगा। छल-छद्म प्रधान आचरण आज भारतीय राजनीति का मुख्य अंग है। नरेन्द्र मोहन के शब्दों में "जिस आचरण में छल, कपट, स्वार्थ, संकीर्णता, लोभ और मोह हो वह आचरण सदाचरण हो ही नहीं सकता - ऐसे सभी आचरण तो भ्रष्टाचार की श्रेणी में आयेंगे।"[1] आज राजनीति भ्रष्टाचार में आकंठ डूबी हुई है। यही इसका प्रमाण है कि, कोयला घोटाला यूरिया घोटाला और, चारा घोटाला आदि घोटालों में भारत के उच्च राजनीतिज्ञ अभियुक्त है। किसी प्रकार चुनाव में जीतना, और अधिकार (सत्ता) हडपना ही आज राजनीतिज्ञों का मकसद है। इसके लिए वे कुछ भी करते हैं। चुनाव के नाम पर काला धन इकट्ठा करना, जातिवाद को बढावा देना आदि इसी मकसद को पूरा करने के कुछ षड्यंत्र है। नरेन्द्र मोहन के शब्दों में - "चूँकि राजनीति अब काले धन व 'सस्ती वाह-वाही' पर आश्रित हो चुकी है अतः लोकतंत्र बहुत तेज़ी से भीडतंत्र में परिवर्तित होता जा रहा है। इस भीडतंत्र ने एक

---

1. नरेन्द्र मोहन, आज की राजनीति और भ्रष्टाचार, पृ. 255

ओर जहाँ अपराधियों व माफिया तत्वों के लिए राजनीति में द्वार खोल दिए है वहीं लोकतांत्रिक आदर्शों व मूल्यों को पाखंड में बदलना प्रारंभ कर दिया है। इस भीडतंत्र में कहा कुछ जाता है, किया कुछ जाता है - और इससे भ्रष्टाचार को विशेष पोषण प्राप्त होता है।"[1] इस प्रकार भारतीय राजनीति अब भ्रष्टाचार का अड्डा बन गयी है। अमरकांत ने अपनी कहानियों के माध्यम से स्वाधीन भारतीय राजनीति पर व्याप्त भ्रष्टाचार एवं शोषण का नक्शा प्रस्तुत किया है। उनकी 'एक बाढ कथा', 'जाँच और बच्चे', 'टिटीहरी', 'कुहासा' आदि कहानियाँ राजनीतिक भ्रष्टाचार एवं आम जनता पर राजनीतिज्ञों के शोषण की गवाही देनेवाली है।

अमरकांत की कहानी 'एक बाढ़ कथा' वास्तव में बाढ कथा ही है। एक बडी नदी के किनारे बसे एक नगर के दो मोहल्लों की कहानी है। हर साल नगर में बाढ आ जाती थी। लेकिन नगर के केवल निचले इलाके पर ही उसका असर पडता था, वहाँ निचले तबके के लोग रहते थे। लेकिन इस बार बाढ़ आयी तो दोनों इलाके में पानी चढ़ गया। दूसरा मोहल्ला जो है नगर के श्रेष्ठतम मोहल्ले हैं, जहाँ नगर के बडे-बडे व्यापारी, ठेकेदार, नामी एडवोकेट, विश्वविद्यालय और डिग्री कॉलेज के शिक्षक, इंजीनियर, डॉक्टर तथा अनेक तरह के छोटे-छोटे अफसर निवास करते हैं। बाढ़ तो हर साल आती रहती है, पर यहाँ के लोग ऐसे समय में भी खूब मस्ती से रहते आये हैं। लेकिन इस बार तो उल्टा हुआ। हर साल निचले इलाके में बाढ़ आने पर सरकार चुप थी लेकिन इस बार तो ऐसा नहीं हुआ। संभ्रांत लोगों के मोहल्ले में बाढ़ आने पर सरकार का तो होश उड गया। "उस समय तक

---

1. नरेन्द्र मोहन, आज की राजनीति और भ्रष्टाचार, पृ. 257

प्रशासन हर साल की तरह कुम्भकर्णी निद्रा में निमग्न था। फिर उसमें सुगबुगाहट हुई। अंत में वह झटके से जाग पड़ा और उस पर एक वदहवासी छा गयी। देखते ही देखते जिलाधीश से लेकर निम्नतम अधिकारी और कर्मचारी तक 'पम्प' 'पम्प' की चीख-पुकार मच गयी। ठीक है कि बाढ़ हर साल आती है और बाढ़ नियन्त्रण के वादे हर साल किये जाते हैं, भाषणों और वक्तव्यों में हर वर्ष यह आश्वासन दिया जाता था कि शीघ्र ही नगर में शक्तिशाली पम्पों की व्यवस्था कर ली जाएगी, पर अच्छे पम्प अब भी यहाँ हैं कहाँ? खैर, इस बार जिलाधीश इतने होशियार थे कि जल्दी ही समझ गये यह समय भाषणों का नहीं है और उन्होंने शक्तिशाली पम्प लाने के लिए कुछ व्यक्तियों को दूसरे शहर रवाना कर दिया।"[1] सरकार अब काफी जागरूक हो गयी थी। जब निचले इलाके में बाढ़ आ जाती थी तो राहत का कार्य इत्मीनान से होता था लेकिन अब तो जल्दी ही एक बाढ़ कंट्रोल विभाग का गठन किया गया। लेकिन समस्या यह थी कि उस बाढ़ कंट्रोल विभाग का इंचार्ज एक मजिस्ट्रेट था, श्यामसुन्दर दास, वह बहुत ही ईमान्दार व्यक्ति था। इससे पुलिसवाले और अन्य कर्मचारी मन ही मन नाराज़ हो गए। जिलाधीश ने जितनी जल्दी हो सके राहत के इंतज़ाम करने का आदेश भी दिया। वह बहुत ही ईमान्दार व्यक्ति था। उसके लिए निचले इलाके के लोग भी बाढ पीडित है और संभ्रांत मोहल्ले का भी। श्यामसुन्दर दास ने बाढ़ पीडितों के लिए चने का इंतज़ाम किया। चने लेकर जब वहाँ पहुँचा तो संभ्रांत मोहल्ले के लोग उस पर टूट पडे। जब वह यह कहता है कि बाढ़ पीडितों को राहत पहुँचाने का जिम्मा मुझे सौंपा गया है तो मोटे एडवोकेट

---

1. अमरकांत, एक बाढकथा, अमरकांत की संपूर्ण कहानियाँ खंड 2, पृ. 86

उसपर टूट पडता है और पूछता है - "हम बाढ़ पीडित है? यह शब्द इस्तेमाल करने की आपकी हिम्मत कैसे हुई?.... अगर बाढ़ की वजह से भगवान को भी भाग कर कहीं शरण लेनी पडे तो इस समय उन्हें बाढ़-पीडित ही कहा जाएगा।"[1] आगे वह कहता है आपको मालूम नहीं है कि हम लोगों के बलबूते पर ही देश का शासन टिका हुआ है "चुनाव में लाखों-करोडों का चन्दा कौन देता है?"[2] इस प्रकार अमरकांत ने राजनीतिज्ञों के भ्रष्ट आचरण का खुलासा किया है। चुनाव के वक्त ये राजनीतिक गण इन लोगों से चंदा वसूल करता है और अधिकार में आकर उनकी खिदमत में काम करता है यानिकि उन्हीं के हाथों का चमचा बन जाता है। श्यामसुन्दर दास जैसे ईमान्दार अफसरों का यहाँ कोई स्थान नहीं है। कहानी के अंत में संभ्रांत मोहल्ले के लोग मिलकर उसका एक पहाडी जिले में तबादला करवाते हैं जहाँ के पानी से डायरिया होने का निरन्तर खतरा रहता था। इसके बाद मंत्री ने भाषण भी दिया कि वह बहुत जल्दी बाढ़ की मास्टर योजना लगू कर दी जाएगी और सरकारी कर्मचारियों की लापरवाही किसी भी हालत में बरदाश्त नहीं की जाएगी। यहाँ ईमान्दारी का कोई स्थान नहीं है। राजनीतिज्ञ और सरकारी कर्मचारी ऐसे लोगों के हाथों के खिलौने हैं जो पैसे पर सोते है और सोने के चमच से खाना खाते हैं।

हमारे देश में अभी भी ऐसे अनेक लोग विद्यमान है, जो पिछडे हैं, अनपढ़ है। ऐसे लोगों की भटकाना हमारे भ्रष्ट राजनेताओं और अधिकारियों के लिए

---

1. अमरकांत, एक बाढ कथा, अमरकांत की संपूर्ण कहानियाँ खंड 2, पृ. 88
2. वही

आसान काम है। इन लोगों के लिए जो योजनाएं सरकार ने बनायी है। उसका सही ढंग से पालन होता ही नहीं जखीरेबाजी एवं चोरी करते हुए राजनीतिक गण इन के उद्धार के रास्ते बंद कर लेते हैं।

'जाँच और बच्चे' नामक कहानी इसकी सच्ची दस्तावेज़ है। गाँव में एक गरीब आदमी की मृत्यु हो जाती है। मृत्यु को लेकर हलचल मचने के कारण सरकार उस पर जाँच करने का निर्णय लेती है। जाँच का काम एक सीनियर, गंभीर और जिम्मेदार अधिकारी (मजिस्ट्रेट) को सौंप दिया गया। जाँच के लिए वह चल पडा। साथ में एक और जूनियर, स्टेनोग्राफर, एक पत्रकार, एक मुस्तैद पुलिस अधिकारी, दो बंदूकधारी पुलिस कांस्टेबल। सडक पर कुछ अन्य लोग मिल गए थे - खंड विकास अधिकारी, प्रधान, लेखपाल, चौकीदार और दो स्थानीय राजनेता थी।

वास्तव में उस आदमी जिसका नाम चिरकुट था, की मृत्यु भूख के कारण हुई थी। उसके लिए जो राशन वगैरह मिलना था उसको प्रधान और अन्य नेता मिलकर हडप लेते थे और अपना कोष भरते थे। जब जाँच अधिकारी वहाँ पहुँच गये तो झोंपडी में एक औरत मिली। औरत के लिए यह भीड परिचित नहीं थी। औरत को देखकर प्रधान इस प्रकार बातें करने लगा कि वह कुछ छुपाना चाहता है। "मतवा राम, मैं बोल रहा हूँ, पहचान रही हो न! अरे सडकिया पार का प्रधान हूँ, तुम्हारा प्रधान, जो हमेशा तुम लोगों की खोज-खबर लेता रहता है! कल ही तो तुम्हारे यहाँ आधी, बोरिया पिसान भेजवाया था... तो वही प्रधान में हूँ। मतवा, सबसे बडे साहब आये हैं, साहब को सच-सच बता दो, कैसे तुम्हारे मरद बेरामी

से मर गये।"[1] सच्चाई यह थी कि प्रधान ही तो वह ज़रूर था लेकिन वह अपना दायित्व तो निभाता ही नहीं था जो एक प्रधान को करना चाहिए था। गाँव के लोग तो इतने पिछडे और निरक्षर थे कि उसको टाइम और स्पेस की जानकारी तक नहीं थी।

जाँच अधिकारी औरत से पूछता है कि उसके पति की मृत्यु कैसे हुई तो वह औरत बताती है - "सरकार.... दुपहरिया बीते आए.... कराह रहे थे, इन्हें कुछ भी नहीं मिला था। नीचे लेटकर पानी माँगने लगे। मुझे एक छोटी सी जली लिट्टी मिली थी, एक टुकडा मैंने खाया था और बचा हुआ इनके लिए रख लिया था। उसे भी वह खा नहीं पाए मालिक, थोडा तोडकर घोंट लिया और हकर-हकर पानी पीने लगे। कुछ देर बाद पेट में दर्द होने लगा.... फिर खूब उल्टी हुई, रात भर कराहते रहे, देह जलती तवे की तरह तप रही थी.... सवेरे सब कुछ खतम हो गया मालिक....।"[2] जाँच अधिकारी के बार-बार पूछने पर प्रधान बीच में आकर बताता है - "कहा न.... बीमारी थी.... ये लोग पैसा कौडी रहने पर भी डॉक्टर के पास नहीं जाते। खूब सुविधा मिली है.... कुछ फायदा उठाते ही नहीं....।"[3] प्रधान को भय था कि अगर औरत के मुँह से अनजाने की 'भूख' शब्द निकल जाय तो उसका जरूर नुक्सान होगा। लेकिन औरत इतनी बेचारी और अनपढ़ थी कि उसके इसकी जानकारी तक नहीं थी कि उसका पति भूख से मर गया है। जाँच अधिकारी

---

1. अमरकांत, जाँच और बच्चे, अमरकांत की संपूर्ण कहानियाँ खंड 1, पृ. 378
2. वही, पृ. 381
3. वही

फिर उससे पूछता हैकि साफ साफ बता दीजिए कि भूख से मरे या बीमारी से तो औरत बताती है कि "मौउवत आ गयी थी, मालिक.... काल ले गया।"[1] इस प्रकार प्रधान बच जाता है। इतना ही नहीं घर की तलाशी लेने से पीला राशन कार्ड मिला वह भी काली जबकि ऐसे लोगों को लाल कार्ड देना चाहिए था। इसके बारे में जब प्रधान से पूछता है तो वह बताता है - "इन लोगों को तो सब कुछ नियमानुसार दिया जाता है, ये लोग पता नहीं क्या करते हैं, इनकी माया ये ही जानें..."[2] कहानी में एक आदमी का कथन इस प्रकार के लोगों की अभावग्रस्त ज़िंदगी की असलियत और इसके पीछे छिपी चाल और षड्यंत्रों के पोल खोलने में सक्षम है - "अभाव और भूख इनकी ज़िंदगी के स्थायी, स्वाभाविक और सामान्य हिस्से हैं, उसके लिए भूख कोई खास बात नहीं, अलग से वह क्या बताती।"[3] इस प्रकार भारत में ऐसे पिछडे वर्ग अब भी विद्यमान है, जिनके विकास को अवरुद्ध करते हुए अपना खजाना भरनेवाले राजनीतिज्ञ और अधिकारी वर्ग भी। ये पिछडे हुए वर्ग अपनी अनभिज्ञता के कारण हमेशा शोषण के शिकार होते रहते हैं और अधिकारी वर्ग हमेशा शोषण के नए-नए तरीके अपनाते रहते हैं और इन लोगों को बेवकूफ बनाते रहते हैं। इन लोगों पर होनेवाले इस राजनीतिक शोषणों को मिटाने के लिए इन लोगों को शिक्षित बनाना ही एकमात्र उपाय है। अमरकांत ने 'कुहासा', 'बस्ती', 'कलाप्रेमी' आदि कहानियों में भी राजनीतिक भ्रष्टताओं का खुलसा किया है।

---

1. अमरकांत, जाँच और बच्चे, अमरकांत की संपूर्ण कहानियाँ खंड 1, पृ. 381
2. वही, पृ. 382
3. वही, पृ. 383

3.5 भ्रष्ट राजनीतिक नेता

अमरकांत ने अपनी कहानियों में कुछ ऐसे राजनीतिक नेताओं का चित्रण किया है जो अपने बडप्पन दिखाने के लिए घूमते पिरते हैं। डींग मारना उनके चरित्र की सबसे बडी विशेषता है। जो कहता कुछ है और करता कुछ और। राजनेता बनने के लिए आज सिद्धांत की राजनीति की आवश्यकता नहीं रह गई है। किसी भी निश्चित तथा अनिश्चित मत पर तात्कालिक लाभ के लिए नेता बना सकता है। अमरकांत की कहानी 'टिटिहरी' बात को बखूबी के साथ प्रस्तुत करती है।

कहानी में नरपति बाबू राजनीतिज्ञ है। एक दिन मोहल्ले के एक सेठ का लडका आकर नरपति बाबू से कहता है कि उसको नेता बनना है तो नरपति बाबू अत्यंत गंभीरता से बताता है "तू किसी नेता का साथ-संग पकड ले, बोलना-बतियाना सीख ले, इसका भी अच्छा ज़माना आ गया है, नेतागिरी सीख जाएगा तो उसमें खप भी जाएगा और हमारा भी कुछ भला होगा। इस काम में जो लगेगा लगा दूँगा। ....पहले तो तुम अखबार पढ़ो, खास तरह से पक्ष या विपक्ष के किसी नेता का भाषण छपा हो, उसे अकेले अपनी छत पर जाकर कई बार जोर-जोर से इस तरह पढो जैसे किसी मीटिंग में भाषण दे रहे हो। रेश्मी कुर्ता छोड़कर शुद्ध खद्दर पहनो, छाती निकालकर चलो, गम्भीर रहो, किताबें पढ़ो, अगर पढ़ न सके तो किताबें खरीदो और जब बाहर निकलो तो एक हाथ में किताब ज़रूर रहे जैसे तुम बहुत अध्ययनशील विद्वान और ज्ञानी हो।"[1] इस प्रकार आजकल राजनीतिक नेता

---

1. अमरकांत, टिटिहरी, अमरकांत की संपूर्ण कहानियाँ खंड 2, पृ. 324

बनना आसान कार्य बन गया है, जो खद्दर के कुर्ते पहनकर, राजनीतिक अंदाज में भाषण देता है, वह नेता बन जाता है।

आज की राजनीति केवल उन लोगों के संरक्षण को प्रश्रय देती नज़र आती है जिन्हें समाज में विशेष अधिकार और हैसियत प्राप्त है। अमरकांत की कहानी 'श्वानगाथा' एक ऐसे समाज का चित्रण करती है जहाँ की जनता लंबे अरसे से पानी-बिजली की सप्लाई, कूडे की सफाई और महँगाई से राहत के लिए चिल्लाते-चिल्लाते शांत हो गई थी। वहाँ एक ओर समस्या का भी सामना उनको करना पडता था। वहाँ पागल कुत्तों की संख्या इतनी बढ़ गई थी कि कुत्तों ने गरीब लोगों को काटना शुरू कर दिया था और इस प्रकार कई लोगों की मौत भी हो चुकी थी। लेकिन प्रशासन ने चुपी साध ली थी। पर विमलदास, जो अनेक सांस्कृतिक, शैक्षिक एवं राजनीतिक संस्थाओं के अध्यक्ष एवं हितैषी थे, उनके पुत्र कमलदास को जब कुत्ते ने काट लिया तो प्रशासन की आँखें खुल गई। अमरकांत कहते हैं - "प्रशासन की दृष्टि में ऐसे महत्वपूर्ण व्यक्ति की संतान को कुछ हो जाना सार्वजनिक हित की एक गंभीर समस्या थी।"[1] कुत्तों को पकडने की योजना बनायी गयी। लेकिन जब आम जनता इसके विरुद्ध आवाज़ उठाने लगी तो विमलदास ने श्वान-विरोधी अभियान को बंद करवा दिया तथा कुत्तों के प्रेम के बारे में एक टिप्पणी भी दी। क्योंकि उन्हें आनेवाला चुनाव किसी प्रकार जीतना था। इस प्रकार अमरकांत ने अपनी ज़रूरत के मुताबिक रंग बदलनेवाले राजनेताओं की तस्वीर भी अपनी कहानियों के द्वारा खींची है।

---

1. अमरकांत, श्वानगाथा, अमरकांत की संपूर्ण कहानियाँ खंड 2, पृ. 206

3.6 चुनाव की राजनीति

लोकतांत्रिक व्यवस्था में 'चुनाव' धुरी का काम करता है। मतदान द्वारा जनता जिन नेताओं को चुनती है, वे ही शासन की बागडोर संभालते हैं। जनता इस विश्वास पर सत्ता उनको सौंपती है कि किसी भी संकट में ये नेता उनकी रक्षा करेंगे। लेकिन जनता के विश्वासों का फायदा उठाते हुए आज नेता एक प्रकार की नयी रणनीति अपनाते हैं। किसी भी तरह सत्ता हडपना ही उनका एकमात्र लक्ष्य है। भ्रष्टाचार ने चुनाव की प्रक्रिया में भी अपनी जडें जमायी है। चुनाव की भी अब एक राजनीति है। नरेन्द्र मोहन के शब्दों में "....चुनाव प्रक्रिया व चुनावी राजनीति में भ्रष्टाचार का कुछ न कुछ समावेश हर लोकतांत्रिक देश में देखने को मिलता है, क्योंकि चुनाव में विजय पाने की अदम्य आकांक्षा और ललक व्यक्ति को लगभग अंधा बना देती है, फिर भी पिछले पचास वर्षों में हमारे देश में चुनाव प्रक्रिया जितनी अधिक भ्रष्टाचार से ग्रस्त हुई और उसमें जितनी गिरावट आयी उसकी मिसाल विश्व के अन्य किसी विकसित लोकतंत्र में नहीं मिलती।"[1] यही है भारत की स्थिति। चुनाव जीतने के लिए कई प्रकार के वादे देना, कुर्सी हथियाने के लिए पैसा देना, जाति या धर्म के नाम पर जनता के बीच स्पर्द्धा उत्पन्न करना आदि राजनीतिज्ञों के जाने-पहचाने पैंतरे हैं।

'कुहासा' नामक कहानी में असहाय और बेचारे लडके को रिक्शा और मकान का वादा देकर चुनाव के प्रचार के लिए ले जाकर अंत में चुनाव जीतने पर

---

1. नरेन्द्र मोहन, आज की राजनीति और भ्रष्टाचार, पृ. 253

उसको धोखा देनेवाला राजनीतिक नेता और 'जनशत्रु' में लोगों में आपसी स्पर्द्धा उत्पन्न करने के लिए चोरी-चुपके काम करनेवाला नेता इस चुनावी राजनीति के हिस्से हैं।

3.7 जातिवाद

सत्ता के मोह में आकर राजनीतिज्ञ अंधाधुंध दौड में है। अधिकार पाने के लिए वे कुछ भी करने को तैयार हो जाता है। जातिगत भावनाओं को पनपने का अवसर ये राजनीतिक नेता देते हैं। "यह कहा जा सकता है कि 1957 के आम चुनावों ने भारतीय बुद्धिजीवियों को उन वास्तविक पहलुओं के प्रति जागरूक किया जो मतदान को प्रभावित करते हैं। इसके परिणाम स्वरूप चुनाव के उद्देश्य से जातिगत संबन्धों का उपयोग करने की प्रवृत्ति की व्यापक पैमाने पर निन्दा की गई। ....ठीक बाद के वर्षों में नगरपालिकाओं और पंचायतों में कराए चुनावों ने यह निर्णायक रूप से दिखाया कि जातिगत भावनाएँ बहुत ताकतवर है।"[1] आजकल यह जातिगत भावनाएं सख्त होती दिखाई पडती है। धर्म, जाति व संप्रदाय का सहारा लेकर अब राजनीतिज्ञ चुनाव की रणनीति तैयार करते हैं। नरेन्द्र मोहन के शब्दों में "....देश के राजनीतिक दलों का समस्त चुनावी गणित और चुनावी रणनीति जातिवाद और धर्मांधता के समीकरणों पर आधारित रहती है। जब चुनाव की कोई रणनीति तैयार की जाती है तब पहले यह देखा जाता है कि उस चुनाव-क्षेत्र में जो मतदाता हैं, उनमें से कितने प्रतिशत उस जाति के हैं जिस जाति का

---

1. एम.एन. श्रीनिवास, आधुनिक भारत में जाति, भूमिका से

प्रत्याशी चुनाव में खडा होने जा रहा है।"[1] मतलब किसी जाति व संप्रदाय का सहारा लेता हुआ राजनीति अपना उल्लू सीधा करती है, तब वहाँ जातिवाद का जन्म होता है।

अमरकांत की कहानी 'लोक परलोक' जाति के सहारे चुनाव लडने की इसी प्रवृत्ति की ओर इशारा करती है। कहानी में महेश्वर प्रसाद 'वैरागी' दिनेश के साथ कथावाचक के पास आता है। वह एक राजनीति में दिलचस्पी रखनेवाला व्यक्ति है और सन् 1984 के संसदीय चुनाव में उम्मीदवार के रूप में खडे हो चुके थे। जाति को बहुत महत्व देनेवाला है। वह कथावाचक से 'मैं देश एवं जाति को सबसे अधिक महत्व देता हूँ', 'देश और जाति का जब मामला आता है तो मेरी तबीयत मानती नहीं' ऐसी ऐसी बातें खूब करता है।

वैरागी कथावाचक से कहता है कि मंडी के पास एक महापुरुष रहता है। कहता है कि वह महापुरुषों का नाम नहीं लेता, उसको भाईजी कहता है। और कहता है कि भाईजी बहुत ही बेईमान और काइयाँ व्यक्ति है। वह उसकी नकल करके पार्लियमेंट पर चुनाव लडना चाहता है। कहता है कि अक्बर जिस सम्प्रदाय का है, भाईजी भी उसी संप्रदाय का है। अक्बर वैरागी का एक परिचित व्यक्ति है। अक्बर जो है भाईजी के यहाँ रहता है और उसके लिए काम करता है। लेकिन जब एक बार अक्बर ने भाईजी से कुछ पैसा माँगा तो भाईजी ने नहीं दिया। इतना ही नहीं मारपीट कर अक्बर को वहाँ से निकाल दिया। अवसर का पूरा फायदा

---

1. नरेन्द्र मोहन, धर्म और सांप्रदायिकता, पृ. 137

उठाकर वैरागी ने अक्बर को अपने पास बुला लिया और उसको जो चाहिए वह सब दे दिया। इसके बारे में कथावाचक उससे पूछता है तो वह बताता है - "अरे भाई, ऐसे कामों में बडी सावधानी और होशियारी से काम लेना है, होता है। बहेलिया जैसे चिडिया फँसाता है उसी तरह समझ लीजिए....।"[1] अंत में वैरागी का मकसद पूरा हुआ। अक्बर बालचन्द आर्य बन गए। वैरागी कहता है - "समझिए, काम तो बहुत बडा हो गया। इसे कलियुगी पार्टियाँ और कलियुगी नेता नहीं समझ सकते। अब आप ही बताइए, चाहे एक ही सही, हमारी संख्या तो बढी। ...मेरे चुनाव प्रचार की दृष्टि से भी यह बहुत काम की घटना हुई थी। सन् 1980 वाले चुनाव में अक्बर यानी बालचन्द आर्य ने बडी मेहनत की। घूम-घूम कर खूब नारे लगाये। उसे मंच पर अपनी बगल में खडा करके मैं भाषण देता था। बडी तालियाँ बजती थीं। समझिए मुझे पूरे दिन हज़ार वोट मिले।"[2] इस प्रकार वैरागी के माध्यम से ऐसे धोखेबाज, कपट नेता का चित्रण अमरकांत ने किया है जो जाति व संप्रदाय का फायदा उठाकर अपने लक्ष्य की पूर्ति करता है।

'दर्पण' कहानी का भारतीजी भी एक ढोंगी नेता है। लेकिन लोगों को भटकाने के लिए ही सही भारतीजी द्वारा देनेवाले भाषण में जातिवाद और संप्रदायवाद के विरुद्ध संदेश तो ज़रूर अमरकांत जी ने दिया है - "देश एक संकट के दौर से गुज़र रहा है, जातिवाद व सम्प्रदायवाद हमारे देश के दो भयंकर शत्रु है, जनता को इन दोनों शत्रुओं से बचकर रहना होगा। विभिन्न जातियों व सम्प्रदायों के बीच प्रेम और भाईचारा स्थापित करने से ही हमारा देश विश्व में सम्मानपूर्ण स्थान बना

---

1. अमरकांत, लोक परलोक, अमरकांत की संपूर्ण कहानियाँ खंड 2, पृ. 65
2. वही, पृ. 66

सकता है। मैं अपील करता हूँ कि लोग छोटे-छोटे झगडों को छोडकर ऊपर उठें और इस शहर व देश की प्रेम-शान्ति की महान परंपरा पर चलते हुए नवनिर्माण में आज योग है।"[1] जातिवाद और संप्रदायवाद के ज़ोर पकडनेवाले इस युग में निश्चय ही भारती जी का भाषण एक संदेश है।

3.8 सांप्रदायिकता

भारत कई दशकों से सांप्रदायिकता के खतरे में है। सांप्रदायिकता कोई एकाएक उभरी हुई भावना नहीं है। यह सामाजिक राजनीतिक और सांस्कृतिक पक्ष से जुडी हुई है। भारत में कई धर्मावलंबी लोग रहते हैं। यहाँ प्रत्येक व्यक्ति को कोई भी धर्म पर अपनी आस्था रखने का अधिकार प्राप्त है और उसी के मुताबिक जीने का हक है। लेकिन मानव जाति शदियों से धर्म के अज्ञान में रहने के लिए विवश है। मानव ने अपनी विवेक बुद्धि को खो दिया है और उसके स्थान पर तात्कालिक स्वार्थ, अहंभाव और रूढ़िवादिता की जडें मज़बूत हो गयी है। स्वार्थ और अहंकार इतना अधिक बढ़ चुका है कि लोग धर्म की अवधारणा को भूल गए हैं और वहाँ एक विभाजित चेतना ने जन्म किया है। अब यहाँ सर्वधर्म समभाव का विकास अवरुद्ध पडा है तथा एक दूसरे के प्रति एक आक्रामकता की भावना पनपती दिखाई देती है। नरेन्द्र मोहन के शब्दों में "धर्म का आवरण लेकर अपनायी गयी यह आक्रामकता ही सांप्रदायिकता है।"[2] इस आक्रामकता को कहीं राजनीतिक कारणों से अपनाया, कहीं आर्थिक कारणों से तो कहीं सामाजिक कारणों से।

---

1. अमरकांत, लोक परलोक, अमरकांत की संपूर्ण कहानियाँ खंस 2, पृ. 60
2. नरेन्द्र मोहन, धर्म और सांप्रदायिकता, पृ. 94

जहाँ तक राजनीति की बात है वर्तमान राजनीति का प्रमुख आधार स्वार्थ की भावना है। राजनीतिक नेता अपने लाभ के लिए सांप्रदायिक राजनीति का फायदा उठाता है और निरीह जनता उसमें फंस जाती है। आज़ादी के बाद देश में लोकतांत्रिक व्यवस्था स्थापित हुई। लेकिन जनता द्वारा चुने गए नेता यहाँ शासन की बागडोर संभालने लगे। जनता के मन में यही सोच थी कि स्वतंत्रता के बाद इन राजनीतिक नेताओं के द्वारा उनके हर सपने साकार होंगे। लेकिन ऐसा नहीं हुआ। स्वतंत्र भारत में जितनी राजनीतिक पार्टियाँ थी वे सब धर्म के कर्मकांडी रूप को राजनीतिक लाभ के लिए अपनाया। इस संदर्भ में अज्ञेय का कथन सार्थक है। "....कोई भी दल ऐसा नहीं हुआ, जिसने कि चुनाव लडने में सांप्रदायिक बुद्धि को खत्म कर दिया हो या जात-पांत के आधार को छोड़ दिया हो। सबने सांप्रदायिकता से फायदा उठाना चाहा और उसे उभारा है।"[1] कोई भी राजनीतिक पार्टि इस अपवाद से बचती नहीं है। मुस्लिम लीग ने पाकिस्तान की माँग कर हिन्दुस्तान की भूमि का बाँटवारा करना चाहा। भारत में एकजुट होकर रहनेवाले हिन्दु और मुसलमानों की एकता को यह बाँटवारा करना आसान कार्य नहीं था। इसके लिए उन लोगों ने सांप्रदायिकता की राजनीति को अपनाया। नरेन्द्र मोहन के शब्दों में - "इसमें संदेह नहीं है कि हिन्दु और मुसलमान, सदियों तक एक ही स्थान पर एक साथ रहने के कारण एक ही धरती और संस्कृति से भावनात्मक स्तर पर जुडे हुए थे। ये उनकी जडें थीं जो उन्हें मानवीय अर्थ प्रदान करती थीं। पाकिस्तान के

---

1. अज्ञेय, केन्द्र और परिधि, पृ. 330

निर्माण के पक्षधर यह भली भांति जानते थे कि पाकिस्तान बनने के रास्ते में सबसे बडी बाधा हिन्दुओं-मुसलमानों का सांझा जातीय-सांस्कृतिक संस्कार है। वे इस संस्कार को कमज़ोर और नष्ट कर देना चाहते थे। इन्हीं संस्कारों को तोडने और मिटाने के लिए सांप्रदायिक तनाव और दंगे पैदा किए।"[1] स्वतंत्रतापूर्व भारत में उत्पन्न ये दंगे वास्तव में सांप्रदायिकता राजनीति का हिस्सा है। सांप्रदायिक दंगों का यह सिलसिला स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भी नहीं रुका। अयोध्याकांड, बाबरी मस्जिद का ध्वंस आदि इसके लिए प्रत्यक्ष प्रमाण है। इन दंगों के माध्यम से निश्चय ही राजनीतिक स्वार्थों की पूर्ति हुई है। नरसंहार का यह सिलसिला ज़ारी रहा। स्वतंत्र भारत में सांप्रदायिकता और अराजकता को खुलकर खेलने का अवसर मिला। लेकिन साधारण जनता का इससे कुछ लेना देना नहीं था। वह सांप्रदायिक राजनीति की शिकार हो गयी। सांप्रदायिक दंगे के बाद की भीषण स्थिति का चित्रण करते हुए नरेन्द्र मोहन कहते हैं - "स्त्रियों का अपहरण हुआ, बलात्कार की घटनाएँ घटी। सांप्रदायिकता के राक्षस ने दोनों जातियों को अपने जबडों में भींचकर लहुलुहान कर दिया। राजनीति ने भोले-भाले निरीह लोगों को भुलावे में डालकर मानवविरोधी और संस्कृति विरोधी बना दिया। ....सांप्रदायिक दंगों के कारण दहशत का जो वातावरण बना, उससे गहरा असुरक्षा-भाव पैदा हो गया। ....जैसे जैसे दिन बीतते गए यह एहसास तीव्रतम होता गया, मौत का डर गहराता गया...। कत्लेआम करनेवाले धर्मान्ध कट्टर राजनीतिक दलों के लोग थे। जनसाधारण को

---

1. नरेन्द्र मोहन, सिक्का बदल गया, पृ. 14

बंटवारे से कुछ लेना देना नहीं था, वह सांप्रदायिक राजनीति का शिकार हो गया था।"[1]

अमरकांत की कहानी 'मौत का नगर' इसका सच्चा साक्ष्य है। कहानी सांप्रदायिक दंगे के बाद के वातावरण की भीषणता को व्यक्त करती है। सांप्रदायिक दंगे के बाद के घोर सन्नाटे में राम घर से बाहर निकलता है। कुछ कदम वह आगे बढता है। उसके चेहरे पर घबराहट है। उस भीषण सन्नाटे में उसको लगा कि बाईं ओर के सटे हुए मोहल्ले से एक शोर उठ रहा है और बहुत से लोग मारो-मारो की आवाज़ करते हुए इधर ही दौडे आ रहे हैं। उसके आँखों के सामने एक छुरा चमक उठा। उसको लगा कि घर के अंदर भागना ही उचित है लेकिन कुछ मकानों के सामने बातें करते हुए लोगों को देखकर वह आश्वस्त हो जाता है। आगे चलकर दो और व्यक्तियों के साथ उसकी मुलाकात होती है। ऐसा पहले ही तय किया गया था। उन तीनों के बीच हुई वार्तालाप उस समय की भीषणता को व्यक्त करने के लिए काफी है-

"कोई खास बात?" उन तीनों में से एक ने होठों मे ही भुनभुना कर पूछा।

"स्टेशन के पास एक आदमी को छुरा लगा है।" दूसरे ने सूचना दी।

"हिन्दू है?"

"नहीं मोहमडन है।"

"क्या हिम्मतगंज की तरफ किसी लडकी की लाश मिली है?"

---

1. नरेन्द्र मोहन, सिक्का बदल गया, पृ. 15

"हाँ।"

"मोहमडन है?"

"नहीं, हिन्दू है।"[1]

मोहल्ले के लोगों के मन में असीम भय छा गया था। लेकिन उन लोगों को हमेशा के लिए अलग करना संभव नहीं था। हिन्दुओं और मुसलमानों के मोहल्ले को अलग करने के लिए वहाँ ईंट की एक चहारदीवारी बनायी गई थी। "मोहल्ला जहाँ खत्म होता था, वहाँ ईंट की एक चहारदीवारी कुछ दूर तक चली गयी थी। पर लोगों को अलग करने की कोशिशें सदा के लिए सफल नहीं होतीं और चहारदीवारी को बीच में तोड-तोड कर कई रास्ते बना लिये गये थे। उधरवाला मोहल्ला मुसलमानों का था। आज़ादी के बाद दोनों मोहल्लों के लोग प्रेम से रहने लगे थे। वे आपस में व्यवहार रखते थे। मुसलमान ग्वालों के यहाँ से हिन्दू लोग दूध ले आते तो और हिन्दू बनियों के यहाँ से मुसलमान उधार समान ले आते थे। शादी-ब्याह में वे एक दूसरे के यहाँ जाते थे और एक दूसरे की मदद करते थे। दोनों मोहल्लों के लोगों के बीच अक्सर क्रिकेट या फुटबाल के मैच होते रहते थे।"[2] मतलब दोनों मोहल्लेवालों, हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच आपस में एक प्रकार का लगाव था जिसको नष्ट करना आसान नहीं था। दंगे के बाद भी दोनों के बीच का यह आत्मीय संबन्ध नष्ट नहीं हुआ था। दोनों मिल जुलकर रहना पसंद करते थे लेकिन दोनों के मन में जो मृत्यु भय था, वह उसे अलग करता था।

---

1. अमरकांत, मौत का नगर, अमरकांत की संपूर्ण कहानियाँ, पृ. 377
2. वही, पृ. 377

आगे चलकर उन तीनों के साथ एक आदमी भी जुड जाता है। पहले तो उसके प्रति उन लोगों को गुस्सा आया था लेकिन बाद में उसकी मजबूरी समझकर उसको भी साथ ले जाता है। मुख्य सडक पर आकर तीनों मित्र अलग अलग रास्ते पकडते हैं और राम अकेला हो जाता है। पहले जिस सडक पर हमेशा चहल पहल रहती थी। अब न कहीं रिक्शेवाले थे और न पटरियों पर साइकिल मरम्मत करनेवाली छोटी-छोटी दूकानें थी, जिनके सामने स्कूल कॉलेज के लडकों की भीड़ लगी रहती थी। बहुत-सी अन्य दूकानें भी बंद थी। लाई-चना और बर्फ बेचनेवाले ठेलेवालों की भी कहीं पता नहीं था। कभी-कभी निम्न वर्ग के लोगों का कोई गिरोह एक ओर से आता और दूसरी ओर निकल जाता। अभी राम ने देखा कि मुसलमान मज़दूरों का एक जत्था दाहिनी ओर से तेज़ी से आ गया और बाई ओर चला गया था। कैसे वे भेडों की तरह टकरा रहे थे। कभी-कभी कुत्तों की तरह चौकन्ने होकर इधर-उधर देख लेते। राम आगे बढता गया। जब एक छोटी-सी मुसलमानी बस्ती आ गयी तब वहाँ कहीं-कहीं दूकानों या मकानों के सामने खडे मुसलमानों के गिरोह उन्हें घूरकर देख रहे थे। क्योंकि राम तो पहनावे में हिन्दू था। दोनों के मन में अपनी जान का भय था और कभी भी दंगा फूटने की संभावना भी थी।

मुसलमान बस्ती से राम आगे बढ़ता गया। तभी उसकी ओर हाथ में छुरा लेकर एक नौजवान भागकर आया। राम ने सोचा कि शायद वहीं उसकी मौत आ जाएगी। लेकिन वह नौजवान दौडकर उसकी ओर आया और दूसरी तरफ चला गया। इसके बाद यह सब देखते हुए एक आदमी आकर उससे कहताहै कि घबराइए नहीं, जो छुरा लेकर भागा था, वह बाहर से आया आदमी है और इस मोहल्ले को

बदनाम करना चाहता है। और आदमी ने उनसे पूछा कि वह मजीद दूधवाले के यहाँ से दूध लेते हैं कि नहीं? राम ने उस आदमी को गौर से देखा। उसके मन में आशंका थी कि कहीं वह आदमी उसे धोखा तो नहीं दे रहा है। मतलब उस आतंक भरे वातावरण ने सबके मन को शंकालू बना दिया था। वहाँ से बचकर राम सिविल लाइन्स जानेवाली एक रिक्शा पकडता है, जहाँ वह काम करता था। रिक्शे के अंदर बैठते ही राम सुन्न रह जाता है क्योंकि अंदर एक मुसलमान बैठा था। मुसलमान की भी यही स्थिति थी। "वह भी राम को आतंक और आतंक के प्रति विरोध के भाव से देख रहा था।"[1] दोनों को अपनी जान का भय था इसलिए वे रिक्शा के दोनों किनारों से सटे थे ताकि उनके शरीर स्पर्श न करें। रिक्शा एक ऐसी जगह पर आयी जहाँ आठ-दस आदमियों के गिरोह थे। उन लोगों को देखकर मुसलमान डर के मारे काँपने लगे तो राम के अंदर का इन्सान जाग उठा। वह उसे आश्वासन देने लगा। वहाँ से गुज़रते ही दोनों आपस में बातें करने लगे।

"प्लेग में जैसे चूहे मरते हैं, उसी तरह लोग मर रहे हैं।"

"हाँ, हिन्दू-मुसलमान दोनों मर रहे हैं।"

"सब गरीब मारे जाते हैं। रोज़ कमाने-खाने वाला हूँ। तीन दिन से घर में कुछ नहीं बना।".....

".....अपने तो भूखा रह सकता है आदमी, पर बच्चों को भूखा नहीं देखा जाता जी। ....जैसे बाडे में मुर्गियाँ ठूँस दी जाती हैं, उसी तरह औरतें भाग कर आयी हैं...

---

1. अमरकांत, मौत का नगर, अमरकांत की संपूर्ण कहानियाँ खंड 1, पृ. 380

"....गलतियाँ दोनों ओर से हो रही हैं।"

"कोई भी पाक-साफ नहीं है जी। मेरे दो-तीन दोस्त हिन्दू है, पर अब वे आँखें नहीं मिलते। झूठ क्यों कहूँ, मैं भी उनसे नज़रें चुराता हूँ।"

यही तो खराबी है। इसलिए हम तरक्की नहीं कर पाते।"[1]

यहाँ अमरकांत ने एक सच्चाई का खुलासा किया है कि इस सांप्रदायिकता के ज़हर को पीने के लिए लोग मजबूर है। उनके मन में सांप्रदायिकता की भावना ने एक प्रकार के डर को उत्पन्न किया है जिसकी आड़ में मनुष्यता सोई पडी है। राम और रिक्शे में मिले मुसलमान भी इस मानसिकता के शिकार है। सिविल लाइन्स के आने पर मुसलमान राम से यह कहकर विदा लेता है कि देखिए आप शाम को लौट कर घर पहूँचता हूँ या नहीं। दंगाग्रस्त इलाका पार करते ही राम शान्ति का अनुभव करने लगा। उसने चारों ओर देखा, खुबसूरत सडकें और दूकानें। हरे-भरे वृक्ष। तभी उनको याद आया कि शाम को फिर उसे लौटना है। उसके मन में भय का आतंक शुरू हुआ।

कहानी सांप्रदायिकता की विकरालता की ओर इशारा करती है लेकिन अमरकांत ऐसे रचनाकार है जो हमेशा प्रतीक्षा का हाथ नहीं छोडते। इस कहानी का अंत भी उन्होंने पाठकों के मन में आशा की किरण को छोडकर वह कहते हैं - "उसको लगा कि हवा की हरहराहट किसी स्त्री के रोने की आवाज़ ले आ रही है।

---

1. अमरकांत, मौत का नगर, अमरकांत की संपूर्ण कहानियाँ खंड 1, पृ. 381

या बच्चों के कराहने की आवाज़? तभी किसी वृक्ष पर कोयल बोलने लगी थी। कोयल की कूक! जब से झगडा हुआ था, पता नहीं कितनी बार कोयल कूकी होगी, लेकिन उसकी ओर उसका ध्यान नहीं जाता था। पर इस समय उसकी कूक बराबर सुनाई देती रही।"[1] यहाँ कोयल की कूक एक प्रतीक्षा है, सांप्रदायिकता के समाप्त होने की और शान्ति के स्थापित होने की।

अमरकांत की कहानी 'जनशत्रु' राजनीतिक फायदे के लिए अंग्रेज़ों की 'फूट डालो राजकरो' की नीति अपनाकर चाल चलनेवाले राजनीतिक नेता के खोखलेपन का पर्दाफाश करती है। कहानी का राजनीतिक नेता महन्त प्रसाद बदवलिया, जिसे लोग महन्त बाबू बुलाते हैं, संसदीय चुनाव में भाग लेने की तैयारी में है। उनके सामने चुनौती यह थी कि जिस निर्वाचन क्षेत्र से वह खडे होने वाले हैं, वह बहुत ही पिछडा और गरीब इलाका है, जहाँ के लोग अभूतपूर्व एकता का प्रदर्शन करते हुए पिछले दो बार से एक ऐसे गरीब और फिसड्डी आदमी को जिताते रहे हैं, जो बडी-से बडी आँधी तूफान में रात-बिरात उनके लिए मरने-कटने को तैयार रहता है। महन्तबाबू के लिए इस गढ़ को लेना आसान नहीं था। इसलिए लोगों के बीच भिन्नता पैदा करने के लिए अपने एक आदमी को वहाँ घुसाता है लेकिन जब इलाके के लोग उस आदमी को रंगे हाथों पकडता है तो महंत बाबू वहाँ पहूँचता है जैसे कि वह वहाँ के लोगों की रक्षा के लिए आया हो। लेकिन लोगों को पता ही नहीं चलता है कि इसके पीछे महंत बाबू है। महंत बाबू के पूछने पर एक

---

1. अमरकांत, मौत का नगर, अमरकांत की संपूर्ण कहानियाँ खंड 1, पृ. 383

अधेड व्यक्ति कहता है - "देखिए साहब, यह गरीब लोगों का मुहल्ला है और हर जाति और धर्म के लोग न मालूम कब से प्रेम और शान्ति से रहते हैं। आज भी मुहल्ले में कोई झगडा झंझट होता है तो हम अपने में ही मिल-जुलकर सुलझा लेते हैं, न बाहर जाते हैं और न किसी बाहरी आदमी को बुलाते ही हैं। इधर पिछले छह महीने से इस मुहल्ले में अजीब-अजीब बातें हो रही हैं। हम बहुत दिनों से ताक में थे कि कौन आदमी है जो यह सब कर रहा है और आज मालूम हुआ कि इसके पीछे कौन है..."[1] यह सुनते ही महन्त बाबू घटना के बारे में पूछता है कि जैसे कि वह कुछ भी जानता नहीं हो। महन्त बाबू के पूछने पर वह आदमी कहता है कि जिस आदमी को उन लोगों ने मुहल्ले से पकडा है उसने कई महीनों से मुहल्ले के घरों में खुद या दूसरों से ढेले फेंक-फेंकवा रहा है। पहले-पहले करीब एक महीने तक बारह-एक बजे मुसलमानों के घरों में ईंट-पत्थर फेंके गये, इससे मुहल्ले में आपस में बडी उत्तेजना भैली। लोगों को किसी तरह समझाया गया। कुछ दिनों बाद हिन्दुओं के घर में ढेले आने लगे। सारा मुहल्ला इकट्ठा हो गया। लोग इधर-उधर दौडे, पर कोई नहीं मिला। वह कहते हैं - "पहले से ही प्रोग्राम बनाकर यह सब किया जा रहा था। अब अलग-अलग जातियों को चुना गया। आपस में, एक-दूसरे पर लोगों को शक-शुबहा पनपने लगा। गनीमत की बात यह थी बाबू जी कि हममें से जो समझदार थे, वे जल्दी ही समझ गये कि कुछ ऐसे लोग है जो हमारी एकता और आपसी मुहब्बत से चिढ़े हुए है और हमे तोडना चाहते हैं...."[2] महन्त बाबू ने

---

1. अमरकांत, जनशत्रु, अमरकांत की संपूर्ण कहानियाँ खंड 2, पृ. 147
2. वही

यह साबित करने की कोशिश की कि बाहर के नहीं मुहल्ले के ही लोगों ने ही इस प्रकार के व्यवहार किया होगा तो मुहल्ले के लोग उसकी बातों को स्वीकारते ही नहीं है।

लोग उस व्यक्ति की ओर आक्रोश से बढ़े तो महंत बाबू को लगा कि बात बिगड जाएगा और वह पकडा जाएगा। महंत बाबू किसी भी तरह उस व्यक्ति को बचाना चाहता था क्योंकि वह जानता था कि नहीं तो वह ज़रूर फंस जाएगा। महंत बाबू नाटक करने लगा जैसे कि वह मुहल्लेवालों के हित के पक्ष में है और उस घुसपैठिए को मारना चाहता है। महंत बाबू के बार-बार कहने पर लोगों ने उस व्यक्ति की मुश्कें खोल दीं और उनके सामने लाकर खडा कर दिया। महंत बाबू ने उसको ऐसी मार दी जिससे वह ज़मीन पर लुढ़क गया और जल्दी में वहाँ से उठकर भाग गया। इस प्रकार महंत बाबू ने उसको बचाने का रास्ता बनाया।

इस प्रकार महंत बाबू ने सांप्रदायिक राजनीति का चाल चलकर चुनाव जीतना चाहता था। लेकिन वह असफल रहा। पर इस व्यवहार से उसे लोगों का विश्वास तो प्राप्त हुआ क्योंकि लोगों को समझ में ही नहीं आया कि इन सबके पीछे महंत बाबू है।

सांप्रदायिक राजनीति देश की सबसे बडी समस्या है। भारत के राजनीतिज्ञ अपने स्वार्थ लाभ के लिए इसको एक हथियार के रूप में अपनाते हैं और जनता में 'फूट डालो राज करो' की नीति को धोपते हैं। अमरकांत इस रणनीति से

वाकिफ है और अपनी कहानियों के माध्यम से जनता को सचेत करने की कोशिश करते हैं।

3.9 प्रशासनिक भ्रष्टाचार एवं शोषण

देश का प्रशासनिक क्षेत्र भी भ्रष्टाचार से मुक्त नहीं है। अमरकांत ने अपनी कहानियों में प्रशासनिक क्षेत्र में विशेषकर पुलिस एवं अन्य सरकारी कार्यालयों में होनेवाले भ्रष्टाचार का उद्‌घाटन किया है।

3.9.1 पुलिस व्यवस्था द्वारा शोषण

पुलिस वास्तव में जनसेवक है। व्यवस्था को बनाए रखने में, कानून के परिपालन में तथा जनता के हितों के संरक्षण में पुलिस की अहम भूमिका होती है। डॉ. महेन्द्रकुमार मिश्रा के शब्दों में "प्रत्येक समाज अपने स्थायित्व एवं संगठन को बनाए रखने तथा सदस्यों के बीच सहभाव कायम करने के लिए किसी न किसी तंत्र का विकास अवश्य करता है। पुलिस जननियंत्रण का एक ऐसा ही हिस्सा है।"[1] समाज में अराजकता का नियंत्रण करना तथा मानवीय व्यवहार को सुस्पष्ट नियमों के अंतर्गत निर्देशित करना पुलिस का दायित्व है। परंपरागत रूप से पुलिस की छवि सत्ताधीशों एवं प्रभावशाली व्यक्तियों के लिए कार्य करनेवाली उस संस्था के रूप में रही है जो आम आदमी के लिए एक 'भय' का कार्य करती है। स्वातंत्र्योत्तर भारत में वैश्विक स्तर पर सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, प्रशासन एवं तकनीकी

---

1. महेन्द्रकुमार मिश्रा, सामाजिक न्याय, मानवाधिकार और पुलिस, पृ. 23

क्षेत्रों में बारी परिवर्तन आए। इन बदलावों की बयार से पुलिस भी अछूती नहीं रही। जनता के हित और संरक्षण हेतु तथा सामाजिक न्याय और शान्ति हेतु जिस संस्था का गठन किया गया, वह बाद में जनता का भक्षक बनने लगी। जनता के हित को छोडकर उनका लक्ष्य केवल अपना हित और लाभ बन गए।

आजकल संकीर्ण स्वार्थों से युक्त भारतीय राजनीति तथा शिथिल न्याय प्रणाली के साये में पनपती भ्रष्ट एवं अकर्मण्य पुलिस से पूरा भारतीय समाज त्रस्त होता रहता है। आज 'पुलिस' शब्द ही अपने आप में भय, अविश्वास तथा क्रूरता का परिचायक बना हुआ है। इसमें कोई संदेह नहीं कि पुलिस थानों में आम व्यक्ति के साथ हमेशा अमानवीय व्यवहार होता रहता है। गवाहों को मतलबी पुलिस द्वारा भ्रमित किया जा रहा है। गाली-गलौज के बिना बात पूरी नहीं होती अर्थात् कानून रक्षक की भूमिका निभाता नहीं है। जिनके पास पैसा और अधिकार है आजकल अधिकांश पुलिस उनके हाथों की कठपुतली है। आम जनता के साथ उनका व्यवहार बहुत ही बुरा और गिरा हुआ है।

अमरकांत की कहानी 'फर्क' इस बात की सच्ची दस्तावेज़ है। कहानी में एक पंद्रह साये का लडका चोरी करता हुआ पकडा जाता है। मुहल्ले के लोग उसे पुलिस थाना ले जाते हैं। थाने में दारोगा उसे मारता है और धमकी देता है। दारोगा लडके से कहता है - "देख वे, साफ-साफ बता, नहीं तो मारते-मारते हलुआ बाहर कर दूँगा। मुझे जानता नहीं, बडों-बडों की हड्डी-पसली एक कर चुका हूँ, तेरी क्या हस्ती। मेरे हाथ से कोई बच नहीं सकता, यमराज के यहाँ से पकड़ माँगवाता

हूँ। सब कुछ साफ-साफ बता जा।"[1] लडका कहता है कि जब भूख बर्दाश्त नहीं होता तब चोरी करता हूँ तो वहाँ खडे लोगों में से एक ने चिल्लाकर कहा कि यह झूठ बोल रहा है और ये सब पेशेवर होते हैं और इसे मुर्गा बनाकर पीठ पर दस-बीस ईटें रख दीजिए। दारोगा ने दो-चार झापक और लगाए। लडका पहले की ही तरह दो-तीन बार चीखा। फिर वह अपनी कहानी बताने लगा। उसका बाप मर चुका था और उसकी माँ ने दूसरी शादी की थी। उसकी माँ का दूसरा पति उसपर खूब अन्याय करता है। वह अपने लडके को तो खूब शौक से रखता है, पर उसको बहुत कष्ट देता है। वह उससे खूब काम लेता है। उसको रोज़ मारता है और खाने के लिए एकाध रोटी दे देता है। भूख के कारण उसकी चोरी की आदत पड़ गयी। वह कोई भारी चोरी नहीं करता। वह घरों में घुसकर जो कुछ मिलताहै खा-पी जाता है। जब खाने को कुछ नहीं मिलता तो वह हल्के बर्तन या अलगनी पर टँगे कपडों को उठा ले जाता है और किसी के हाथ बेचकर पैसे पा जाता है। उसने कहा कि आज सबेरे वह एक घर में घुसा। उस घर के बाबू आजकल अकेले हैं और सुबह ही दफ्तर के लिए रवाना हो जाते हैं। अन्दर घुसकर उसने चार पराठे खाए और एक गिलास दूध पिया। कपडे चुराकर बाहर निकल ही रहा था उस पर कुछ लोगों की दृष्टि पड़ गयी और वह पकड़ा गया। वह कहते ही भीड में से किसी ने चिल्लाकर कहा कि वह झूठ बोल रहा है, उसको मारना चाहिए। दारोगा भी लडके की बात सुनता नहीं है।

---

1. अमरकांत, फर्क, अमरकांत की संपूर्ण कहानियाँ खंड 1, पृ. 448

बात आगे चल रही थी तो इसी बीच एक एक्का थाने के पास आकर रुका। उसमें से चार सिपाही और एक भारी भरकम व्यक्ति उतरे जिसके हाथ पीछे की ओर मज़बूती से बँधे हुए थे और कमर में रस्सी पडी थी। उसको देखते ही दारोगा कुर्सी से उठ खडा हुआ और भीड को वहाँ से जाने का आदेश भी दिया। लोग आपस में उस व्यक्ति के बारे में बताने लगे। वे आपस में कहने लगे कि वह सुखई डाकू है। एक व्यक्ति डाकू की बहादुरी के बारे में पूछता है तो दूसरा कहता है - "अरे भाई, ये भगवान से भी नहीं डरते, उलिस-पुलिस क्या चीज़ है? कत्ल करना तो इनके बाएँ हाथ का खेल है। यही 205 कत्ल कर चुका है। दिन दहाडे डाका मारते हैं।"[1] यह सुनते एक व्यक्ति ने पूछा कि कहते हैं पुलिस में इसका जाल बिछा हुआ है तो दूसरा जवाब देता है - "पुलिस इससे बेहद डरती है। बहुत से पुलिसवाले इससे तनख्वाहें पाते हैं।"[2] यहाँ अमरकांत ने एक यथार्थ की ओर इशारा किया है। आजकल स्वार्थ ने पूरी दुनिया को अपने कब्जे में कर दिया है। पुलिस व्यवस्था भी इससे अछूती नहीं है। कहानी में चोरी के आरोप पर थाने में लाए गये लडके की बातों पर पुलिस विश्वास नहीं करती है। उसकी बातें सही है या गलत इसका पता लगाए बिना उसको खूब मारता है और उस पर अत्याचार करता है। लेकिन डाकू को जब थाना ले आता है तो उसका व्यवहार दूसरा था। अपने दायित्व को भूलकर ये अकर्मण्य पुलिस इस प्रकार के अधिकारी वर्गों के तलवे सहलाती है और उनके हाथों का खिलौना बनकर काम करती है। अपने

---

1. अमरकांत, फर्क, अमरकांत की संपूर्ण कहानियाँ खंड 1, पृ. 450
2. वही, पृ. 451

दायित्व से विमुख पुलिस की अकर्मण्यता का चित्रण अमरकांत ने 'ज़िंदगी और ज़ोंक' में किया है। "चौकी के सामने एक बेंच पर बैठे पुलिस के दो-तीन सिपाही कोई हँसी मजाक कर रहे थे और उनसे थोडी ही दूरी पर नीचे एक नंगी औरत बैठी हुई थी। वह औरत और कोई नहीं एक पगली थी, जो कई दिनों से शहर का चक्कर काट रही थी। ....उसकी उम्र लगभग तीस वर्ष होगी और वह बदसूरत, काली तथा निहायत गन्दी थी। वह जहाँ जाती, कुछ लफंगे 'हा-ह्' करते उसके पीछे हो जाते। वे उसको चिढ़ाते, उस पर ईंट फेंकते और जब वह तंग आकर चीखती-चिल्लाती भागती तो लडके उसके पीछे दौडते।"[1] वास्तव में पुलिसवाले उस पगली की स्थिति को देखकर भी उसको अनदेखा कर रहे थे और हंसी मजाक में मग्न थे। पुलिस को उस पगली का संरक्षण करना चाहिए था लेकिन वह ऐसा नहीं करती। यहाँ अपने दायित्व से विमुख अकर्मण्य पुलिस का चित्रण ही अमरकांत ने किया है।

वास्तव में पुलिस को जनता के हित एवं संरक्षण के लिए काम करना चाहिए। नीति एवं न्याय के पहरेदार के रूप में जो पुलिस जनता के सामने थी वह आज अनीति एवं अन्याय के पक्षधर बन गयी है।

3.9.2 नौकरी के क्षेत्र में भ्रष्टाचार

आजकल 'नौकरी' युवकों की सबसे बडी चुनौती बन गयी है। प्रतिवर्ष हज़ारों लोग उच्च श्रेणी में पास होकर बाहर निकल रहे हैं। पढ़ने में माहिर और

---

1. अमरकांत, जिंदगी और जोक, अमरकांत की संपूर्ण कहानियाँ खंड 1, पृ. 77

योग्य लोगों में से कितने को अपनी क्षमता एवं योग्यता के मुताबिक नौकरी मिलती है यह विचारणीय है। नौकरी का क्षेत्र भी आजकल भ्रष्टाचार का कारखाना बन गया है। योग्यता और क्षमता का आज कोई मूल्य ही नहीं। केवल नाम के लिए इंटरव्यू लेता है लेकिन नौकरी किसी अयोग्य को मिलतीहै। वहाँ सिफारिश और पैसे के बिना काम ही नहीं चलता। राजनीति और प्रशासन मिलकर अपने फायदे के लिए परीक्षार्थियों से पैसा लेता है, जिसको आम जनता घूस कहती है और राजनीतिज्ञों और कार्यकर्ताओं के लिए वह 'घूस' नहीं 'डोनेशन' है। नौकरी के क्षेत्र में होनेवाले इस भ्रष्टाचार का चित्रण बहुत पहले ही अमरकांत ने किया था। 'इंटरव्यू', 'डिप्टी कलक्टरी', 'एक निर्णायक पत्र' आदि कहानियों में अमरकांत ने इसी समस्या को अभिव्यक्ति देने की कोशिश की है।

आजकल नौकरी के लिए जो इंटरव्यू चलाया जाता है, वह एक नाटक मात्र है। वास्तविकता यह है कि उक्त पद के लिए व्यक्ति को पहले ही तय किया जाता है और समाज की आँखों में धूल झोंकने के लिए इंटरव्यू के नाम पर नाटक रचा जाता है। प्रस्तुत समस्या का खुलासा करनेवाली कहानी है - 'इंटरव्यू'। कहानी राशनिंग विभाग में क्लर्क के रिक्त पद के लिए होनेवाले इंटरव्यू का बयान करती है। अधिसूचना के अनुसार इंटरव्यू के लिए बडी भीड़ जमी हुई थी। इंटरव्यू दस बजे शुरू होनेवाला था। लेकिन अधिकारियों के आने में देरी होने से एक बजे ही इंटरव्यू शुरू होता है। दो तीन लोगों का इंटरव्यू लिया गया और बाकी लोगों को बुलाया भी नहीं गया। कुछ समय बाद राशनिंग अधिकारी बाहर आकर सूचना देता है कि उक्त पद के लिए योग्य व्यक्ति को चुन लिया गया है और आगे और लोगों

का इंटरव्यू नहीं ले सकता। सभी लोगों के मूँह शर्म और अनजान अपमान से लाल हो गए। जाते वक्त वे लोग आपस में अपनी शंकाएँ बाँटते हैं। किसी ने प्रश्न किया क्यों जी सुनते हैं, यहाँ के अफ्सर लोग घूस लेते हैं।

शंकालू तथा डरपोल सज्जन आगे बढ़ गए और उन्होंने गाल फुलाकर उत्तेजित स्वर में अपनी सम्मति प्रकट की, "हो सकता है साहब, हो सकता है। इस ज़माने में किसी के बारे में कुछ कहा नहीं जा सकता।"

"राशनिंग विभाग तो भ्रष्टाचार का अड्डा है।"

".....चलो अच्छा हुआ कि नहीं लिये गये।"

"मन्त्री तक खाने लगे हैं, फिर इन छोटे-मोटे अफसरों की क्या बात?"[1]

इस प्रकार अमरकांत ने एक सामाजिक सच्चाई की ओर इशारा किया है। आजकल सारे क्षेत्रों में राजनीति ने अपना जाल बिछा दिया है। पैसा और अधिकार के बलबूते पर ही सारा कार्य चल रहा है। जिनके पास ये दोनों है वे ही आज एशोआराम की ज़िंदगी जी सकते हैं।

'डिप्टी कलक्टरी' कहानी का नारायण डिप्टी कलक्टर बनना चाहता था। इसके लिए जद्दोजखत कोशिश भी करता था। दो बार डिप्टी कलक्टरी की परीक्षा में वह बैठा लेकिन दुर्भाग्यवश उत्तीर्ण नहीं हुआ। नारायण ने हार नहीं माना। उसकी कोशिश जारी रही। तीसरी बार वह पास हुआ। शकलदीप बाबू ने उधार

---

1. अमरकांत, इंटरव्यू, अमरकांत की संपूर्ण कहानियाँ खंड 1, पृ. 20

लेकर अपने लडके का फीस भरता था उसके लिए सारी सुविधाएँ प्राप्त करायी थी। नारायण के पास होने का समाचार सुनकर शकलदीप बाबू और उसके घर के लोगो में खुशी का ठिकाना ही नहीं रहा। परीक्षा में उत्तीर्ण होने के बाद नारायण ने इंटरव्यू भी अच्छा किया। उसको पक्का था कि नौकरी उसे मिल जाएगी लेकिन जब डिप्टी कलक्टरी को नतीजा निकला तो उनका विश्वास मिट्टी में मिल गया - "...उनका नाम तो है ही, यह है कि ज़रा नीचे है, दस लडके लिये जाएँगे, लेकिन मेरा ख्याल है कि उनका नाम सोलहवाँ-सत्रहवाँ पडेगा।" नारायण ने इंटरव्यू तो अच्छा दिया था और उसके पूरा भरोसा था कि नौकरी मिल जाएगी। लेकिन उसकी नियति दूसरी थी।

'एक निर्णायक पत्र' नामक कहानी का मास्टर कुमार विनय भी इस प्रकार व्यवस्थागत भ्रष्टाचार को झेले गए व्यक्ति है। कुमार विनय एम.ए. करने के बाद नौकरी की सभी मुम्किन प्रतियोगिताओं में बैठने के बावजूद भी सफल नहीं हो सका। व्यवस्था द्वारा किये गये पहले धोखे के बाद भी 'निराशा' शब्द तक अपने पास फटकने नहीं दिया। उसने अपनी कोशिश जारी रखी। लेकिन बाद में अपनी असफलता का कारण उसकी समझ में आया, जब एक में कुछ माँग गया, किन्तु उतनी धनराशी उसके पास थी ही नहीं, यदि होती भी तो वह इसके लिए तैयार भी नहीं था। यहाँ अमरकांत ने व्यवस्था द्वारा किए जानेवाले भ्रष्टाचार का पर्दाफाश करने की कोशिश की है तथा कुमार विनय के द्वारा उन्होंने व्यवस्थागत धोखे से तंत्र आकर निराश होकर घूमनेवाले युवजनों के सामने एक मिसाल पेश किया है। क्योंकि कुमार विनय कभी भी हार मानने के लिए तैयार नहीं था। "व्यवस्था के

भ्रष्टाचार को उसने चुनौती के रूप में स्वीकार करके तत्काल दो फैसले कर लिए, जिनमें एक तो यही है कि कोई नौकरी न करके स्वावलंबन का मार्ग अपनाते हुए नये लोगों को अपने से भी अधिक योग्य बनाएगा, जिससे वे अपने प्रयासों में ज़रूर सफल निकल जाएं।"[1] इस प्रकार अमरकांत ने पाठकों के सम्मुख एक आदर्श पेश करने की कोशिश की है।

नौकरी आजकल सबके सामने एक बहुत बडी समस्या है। व्यवस्थागत भ्रष्टाचार ने उस समस्या को और अधिक पेचीदा बनाया है। इससे छुटकारा पाना कहाँ तक संभव है - यह विचारणीय है। 'इंटरव्यू' कहानी के उम्मीदवार और डिप्टी कलक्टरी का नारायण इस व्यवस्थागत भ्रष्टाचार के शिकार थे लेकिन मास्टर कुमार विनय के द्वारा अमरकांत ने एक समाधान तो अवश्य प्रस्तुत किया है।

3.9.3 कार्यालय अधिकारियों और कर्मचारियों की अनास्था एवं शोषण

अमरकांत की कहानी 'एक धनी व्यक्ति का बयान' सरकारी कार्यालय के कर्मचारियों की अनास्था एवं उच्च अधिकारियों द्वारा कर्मचारियों के शोषण पर प्रकाश डालती है। कहानी का पात्र विमल इंटर पास होते ही पिताजी से उसे यह आदेश मिला कि वह बडा हो गया है इसलिए उसको नौकरी करना चाहिए ताकि पिताजी से उसका खर्च नहीं उठाया जा सकता। किसी भले आदमी की खिदमत से उसको एक सरकारी दफ्तर में जूनियर ग्रेड की क्लर्की मिली। उसकी खुशी का ठिकाना ही नहीं था, लेकिन कार्यालय जाकर उसे कई प्रकार की परेशानियों का

---

1. अमरकांत, एक निर्णायक पत्र, अमरकांत की संपूर्ण कहानियाँ खंड 2, पृ. 300

सामना करना पडा। वहाँ के उच्च अधिकारियों और सहकर्मियों का उसके साथ जो व्यवहार था, बहुत ही गिरा हुआ था। शुरू से ही दफ्तर का माहौल उसका अनुकूल नहीं था। जब वह दफ्तर पहूँचता तो लोग या तो उपेक्षा से मूँह फेर लेते अथवा हँसने लगते। कुछ लोग फिकरे कसने से भी बाज नहीं आते। आपस में बात करने के बहाने से 'चापलूस', 'सिफारिशी टट्टू', 'चमचा', 'वनमानुष' आदि शब्दों का इस ढंग से इस्तेमाल करते कि वे उसके दिल पर चोट करते। कहानी का अंश है - "मैं सबसे मीठा बोलता, सबको नमस्कार करता, लेकिन लोगों के चेहरे दूसरी ओर घूम जाते। मैं अगर कोई बात किसी से पूछता तो वह व्यंग्य से टेढ़ा मुँह करके कहता, 'आप महान हस्ती है, 'आपको कौन बता सकता है?' जो मुझसे एक सप्ताह भी सीनियर था, वह मेरे काम में मीनमेख निकालता, मुझ पर उपदेश झाड़ता, मेरी लानत-मलामत करता। 'पता नहीं कहाँ के निकम्मे भरती कर लिए जाते हैं?"[1] रोज़ जब वह कार्यालय पहूँचता तो मेज़ पर कोई-न-कोई कागज़ रखा मिलता, जिस पर कुछ अल-जुलूल लिखा रहता अथवा कोई बेहूदा चित्र बनाए रखता। एक दिन मेज़ पर एक फटा पुराना धूल भरा जूता मिला। जूते के बारे में पूछा तो सहकर्मि हंस पडे, चपरासी ने मूँह दूसरी ओर कर लिया। चपरासी से मेज़ साफ करने को कहा तो वह बोला कि सफाई का काम जमादार का है, मैं तो नहा धोकर पूजा पाठ करके आता हूँ। ज़मादार को बुलाने को कहा तो चापरासी कहता है - "अच्छा देखिए.... उधर जाऊँगा तो देखूँगा, अभी तो वह मिलेगा भी नहीं, बारह-साढे बारह बजे आता है....।"[2] यहाँ अमरकांत ने सरकारी कर्मचारियों की अनास्था की ओर

---

1. अमरकांत, एक धनी व्यक्ति का बयान, अमरकांत की संपूर्ण कहानियाँ खंड 2, पृ. 136
2. वही, पृ. 137

इशारा किया है। लोग तो सरकारी नौकरी मिलने के बाद उसके प्रति कोई ईमान्दारी भी नहीं रखते। अपनी मर्ज़ी के अनुसार काम करते है। समय की कोई परवाह नहीं करते। जब चाहे दफ्तर आते हैं, जब चाहे जाते हैं।

कार्यालय में विमल को और कई समस्याओं का सामना करना पडा। एक दिन देखा तो उसका टिफिन कैरियर गायब था। दूसरे लोगों से पूछा तो लोगों ने निर्दोष बनते हुए अपनी अनभिज्ञता प्रकट की। फिर कई दिनों तक यह मज़ाक जारी रहा तो एक उच्च-अधिकारी से लिखित रिपोर्ट कर दी। सेक्शन इन्चार्ज बुलाये गए, कुछ लोगों से और पूछताछ हुई जिसके परिणाम स्वरूप उल्टे उस पर डाँट पडी कि वह लापरवाह है, उसकी वजह से अनुशासनहीनता बढ़ रही है और टिफिन कैरियर वह दूसरी जगह पर छोड आया है क्योंकि दफ्तर में आज तक कोई चीज़ गायब ही नहीं हुई है।

3.10 व्यवस्था के खोखलेपन पर व्यंग्य

अमरकांत ने अपनी कहानियों में केवल राजनीतिक भ्रष्टाचार का खुलासा ही नहीं किया बल्कि व्यवस्था के खोखलेपन पर व्यंग्य भी खूब किया है। उनकी 'हत्यारे', 'एक बाढ़ कथा', 'देश के लोग' आदि कहानियाँ इसके लिए उदाहरण है।

'हत्यारे' कहानी भारत की पूरी व्यवस्था पर व्यंग्य है। कहानी पान की दूकान पर मिलनेवाले दो नवयुवकों की बातचीत से शुरू होती है। गोरा युवक साँवले से पूछता है कि इतना लेट क्यों हो गये? तो साँवला बता रहा है कि नेहरु का पत्र मिला था। उसमें उन्होंने साँवले से प्राइम मिनिस्टर का पद संभालने को

कहा था। गोरा पूछता है कि तो नेहरू क्या कहता है तो साँवला बताता है - "वही पुराना राग! इस बार लिखा है अब मैं थक गया हूँ। गाँधीजी देश का जो बार मुझे सौंप गये आपके मज़बूत कंधों पर रखना चाहता हूँ। इस अभागे देश में आज आपसे काबिल और समझदार दूसरा कोई भी नहीं है।"[1] यहाँ भारत में नेहरु के बाद कौन भारत का प्रधानमंत्री बनेगा इस बात को लेकर संसद के सदस्यों में एक प्रकार की होड मच गयी थी। नेहरू जो है अपनी ही दल के सदस्यों के बीच इस प्रकार की होड और नेताओं के बीच फैले भ्रष्ट आचरणों को देखकर बहुत चिंतित भी थे। इस बात को भी उस युवकों के माध्यम से व्यंग्यात्मक ढंग से अमरकांत प्रस्तुत करते हैं - "मेरे अफ्सर मुझ को धोखा देते हैं। जनता की भलाई के लिए मैंने पाँचसाला योजनाएँ शुरू की, लेकिन ब्लॉकों के सरकारी कर्मचारी अपने घरों को भरने में लगे हैं। मैं जानता हूँ कि सारे देश में कुछ लोग लूट-खसोट मचाये हुए हैं, लेकिन मैं उनके खिलाफ कोई कार्रवाई नहीं कर सकता।"[1] आगे बढ़ते हुए साँवला कहता है कि कल मुझे अमेरिका के प्रेसीडेंट केनडी का एक तार मिला था। गोरा पूछता है कि उसमें क्या लिखा था तो साँवला बताता है - "मुझको अमेरिका बुला रहा है। उसने लिखा है - आप जैसा साहसी व्यक्ति आज संसार में कोई दूसरा नहीं। आप आ जाएँगे तो अमेरिका निश्चित रूप से रूस को युद्ध में हरा देगा।"[2] यहाँ कनेडी ने नेहरु के नाम पर जो पत्र भेजा था उस पर अमरकांत जी व्यंग्य कराते है।

---

1. अमरकांत, हत्यारे, अमरकांत की संपूर्ण कहानियाँ खंड 1, पृ. 204
2. वही, पृ. 205
3. वही, पृ. 206

गोरा और साँवला एक मधुशाला में पहुँचते हैं। वहाँ गोरा जितना जीता है साँवले से उतना पी न सका। गोरा बिगडकर उससे कहता है - "मैंने सोचा था कि प्राइम मिनिस्टर होने पर मैं तुमको भ्रष्टाचार निवारण समिति और जातिभेद उन्मूलन समिति का अध्यक्ष बना दूँगा। लेकिन जब तुम इतनी पी नहीं सकते तो अवसर आने पर घूस कैसे लोगे, जालसाजी कैसे करोगे, झूठ कैसे बोलोगे? फिर देश की सेवा क्या करोगे, खाक।"[1] अर्थात देश की सेवा का अर्थ आज घूस लेने में और जालखाजी करने में सीमित हो गया है। सब कहीं भ्रष्टाचार और धोखेबाजी व्याप्त है। अमरकांत ने नेहरू युग की कुछ घटनाओं को लेकर व्यवस्था विरोधी तत्वों पर व्यंग्य करने की कोशिश की है।

'एक बाढ़ कथा' नामक कहानी में बाढ़ आ जाने पर मजिस्ट्रेट जो ईमान्दार था, दोनों मोहल्ले के लोगों के प्रति उसने समान संवेदना जताई थी। लेकिन संभ्रान्त लोगों ने उस पर ऐसा व्यवहार किया था कि उसने कोई पाप किया हो और सरकार और प्रशासन उसकी मुट्ठी में हो। तो दूसरे मोहल्ले के मतलब निचले तबके के लोगों में से एक नवयुवक जो हमेशा न्याय के लिए लडना रहता है, संभ्रान्त लोगों पर व्यंग्य कसते हुए कहता है - "मजिस्ट्रेट साहब, हम यह अन्याय नहीं चलने देंगे। ....भाइयों, अब यह जुलुम नहीं चलेगा। आप उस बाँध पर देखिए, जो देवियाँ फोम के गद्दों और फूल की सेज पर सोने की आदि हैं, वे धूप में मुरझाई हुई खडी हैं, फिर मजिस्ट्रेट की ओर घूम गया, "माफ कीजिए मजिस्ट्रेट साहब, आपको पता

---

1. अमरकांत, हत्यारे, अमरकांत की संपूर्ण कहानियाँ खंड 1, पृ. 209

नहीं ये लोग कौन हैं। इन्हीं लोगों के बल पर सरकार चल रही है। ये समाज के मक्खन हैं, मलाई हैं, देश के सिरताज हैं।"[1] इस प्रकार अमरकांत ने प्रशासन और सरकार को चमचा बनाकर फायदा उठानेवाले अधिकारी वर्गों पर प्रभावशाली ढंग से व्यंग्य किया है।

3.11 क्रान्ति का आह्वान

अमरकांत जनपक्षधर लेखक है। उनका जुडाव देश की साधारण जनता से है। उन्हीं के ही शब्दों में - "मैं राष्ट्रीय आंदोलन से निकला एक ऐसा साधारण व्यक्ति हूँ, जिसने साहित्य को एक राष्ट्रीय और सामाजिक कार्य समझकर स्वीकार किया। मेरी प्रतिबद्धता साधारण जन से ही है, जो इस देश के भाग्य नियंता है।"[2] साधारण जनता के पक्ष में खडे होकर वे उनपर होनेवाले अत्याचारों के प्रति आवाज़ उठाते हैं। सामाजिक, राजनीतिक अव्यवस्था को मिटाने के लिए वे जनक्रान्ति का आह्वान करते हैं। उनकी 'कम्यूनिस्ट', 'जनमार्गी', 'धरती के लिए' आदि कहानियों में जनक्रान्ति के स्वर मुखरित हैं।

'कम्यूनिस्ट' कहानी तीन भाइयों पर केन्द्रित है। बडे ठाकूर विशाल सिंह अपने को गाँधीवादी मानता है। दूसरे ठाकूर समाजवादी है और तीसरे ठाकूर जो है गाँव के नवयुवकों के संगठन का नेता है जो भारत में हिन्दू राज्य की स्थापना करना चाहता है। कहानी में बडे ठाकूर विशाल सिंह ने मज़दूर भोलू की पत्नी

---

1. अमरकांत, एक बाढकथा, अमरकांत की संपूर्ण कहानियाँ (2), पृ. 90
2. अमरकांत, कुछ यादें कुछ बातें, पृ. 17

सुनरी पर गंदी हरकत की तो भोलू जो आर्थिक रूप से बडे ठाकूर पर आश्रित है, उसका प्रतिरोध अमरकांत ने यों प्रस्तुत किया है - "बडे ठाकूर, मैं यह पूछने आया हूँ कि गरीबों की इज्जत होती है कि नहीं! आज मैं इसका फैसला कर दूँगा। जेहल-फाँसी का मुझे डर नहीं है। क्या समझकर आपने सुनरी को पकड लिया था। तुम्हारा दिया खाते हैं तो छाती फाडकर काम भी करते हैं। जन्म-भर की गुलामी तो नहीं लिखा ली है? आखिर हमारी भी इज्जत-आबारू है....।"[1] यहाँ भोलू अपने अधिकारों के प्रति सजग साधारण जनता को प्रतिनिधि है जिसके माध्यम से अमरकांत यह दिखाना चाहते हैं चुप रहने से बदलाव संभव नहीं उसके लिए क्रान्ति की ज़रूरत है।

'धरती के लिए' कहानी नाम के ही समान 'धरती के लिए' संघर्ष करनेवाले नौजवानों की कहानी है। परतंत्र भारत में गुलामी से मुक्ति पाने के लिए संघर्षरत कथावाचक, निर्मल, निर्मल का शिष्य रवि, शंभू आदि नौजवानों की क्रान्तिकारी चेतना से युक्त मन की अभिव्यक्ति है प्रस्तुत कहानी। नौजवानों का विचार है कि गुलामी से मुक्ति पाने के लिए चुप रहने से कोई फायदा नहीं उसके लिए क्रान्ति करना चाहिए। इसकी योजनाएँ बनाने के लिए वे लोग नगीना मुहर्रि के कमरे में मिल जाते हैं। सबसे पहले वे कचहरी के दफ्तर में आग लगाने की योजना बनाते हैं और बन्दूकधारी सिपाही से आँखें चुराते हुए आग लगाते हैं। इस प्रकार वे लोग अपनी प्रतिक्रिया जाहिर करते हैं। पुलिस उन लोगों की तलाश करती रही। एक

---

1. अमरकांत, धरती के लिए, अमरकांत की संपूर्ण कहानियाँ खंड 2, पृ. 437

दिन यदुनन्दन बाबू आकर कथावाचक का दरवाज़ा भड़भडाया और पिताजी से कहा कि शम्भू और नगीना मुहर्रिर गिरफ्तार हो गए हैं। कथावाचक को लगा कि गिरफ्तारी की बात सुनकर पिता भयभीत होंगे और उसको डाँटेगे। लेकिन प्रतीक्षा के विरुद्ध पिताजी ने कहा - "जेल से डरना क्या भाई साहब? अरे जेल में तो गाँधीजी, पंडितजी और एक-से एक बडे आदमी पडे हुए हैं। क्या सरकार उनको मार देती है? अगर पंडित मोतीलाल के लडके जेल में रह सकते हैं तो मेरा लडका क्यों नहीं रह सकता?"[1] यहाँ अमरकांत ने एक बुजुर्ग के मन की क्रान्ति चेतना को दर्शाने की कोशिश की है। युवकों में ही नहीं बडे-बुजुर्गों में भी अपनी धरती के प्रति असीम श्रद्धा है और उसे अपनाने की चाह है। कहानी में रामस्नेहीलाल, पंचदेव, अल्ताफ आदि भी ऐसे नौजवान है जो अपनी धरती के लिए जान देने के लिए भी तैयार हैं। इसके लिए वे दूसरे गाँव जाते हैं और वहाँ के मुखिया और अन्य लोगों से बातें भी करते हैं। कहानी के अंत में कथावाचक की सोच इस बात को सिद्ध करने के लिए सक्षम है कि अपनी धरती के प्रति उसके मन में कितना लगाव है। कथावाचक सोचता है - "....मैं इसी धरती को प्यार करता हूँ? इस धरती को विदेशी लोग लूट रहे हैं और इसी की रक्षा के लिए मैं यहाँ आया हूँ और कोई भी कुर्बानी करने की आकांक्षा रखता हूँ।"[2] इस प्रकार अमरकांत जी ने भारत के नौजवानों के मन में सुप्त पडी चेतना को जगाने की कोशिश की है।

---

1. अमरकांत, धरती के लिए, अमरकांत की संपूर्ण कहानियाँ खंड 1, पृ. 350
2. वही, पृ. 357

'जनमार्गी' बलराज नामक एक क्रान्तिकारी नेता की ज़िंदगी को पाठकों के सम्मुख पेश करती है। प्रस्तुत कहानी में बलराज क्रान्तिकारी नेता है और जनकवि भी। आज़ादी की लडाई में शामिल होने के कारण उसे जेल जाना पडा। प्रस्तुत कहानी में बलराज के माध्यम से सामाजिक क्रान्ति का आह्वान देते हैं तो दूसरी ओर उसकी ज़िंदगी के काले पक्ष का भी चित्रण किया है। "आज़ादी मिलने के बाद लोग उसको भूल चुके थे। किसी को अब उसकी क्रान्ति और कविताओं की ज़रूरत नहीं थी, न उसकी ईमानदारी की और न परिश्रम तथा साहस की ही। लोग अब अधिक चुस्त, होशियार, आधुनिक तथा महान हो गये थे। बुद्धिजीवी लोग उसको देखकर इसलिए व्यंग्य से मुस्कुराते तथा उसको चिढ़ाते थे कि वह अपनी रचनाओं में तथा बात करते समय भी यह कह चुका था कि देश में आर्थिक और सामाजिक क्रान्ति होकर रहेगी।"[1] उसकी ज़िंदगी अब इतना बदत्तर हो गयी है कि वह निराशा का अनुभव करने लगा। वह सोचने लगा "यदि क्रान्तिकारी न होकर कोई डाकू या घूसखोर होता, तो क्या फर्क पडता? तब वह शायद सम्मान और निश्चिन्तता का जीवन व्यतीत करता....।"[2] आज की ज़िंदगी के यथार्थ को ही अमरकांत ने व्यक्त किया है। यहाँ वर्तमान दौर में व्यवस्था बेईमानों और घूसखोरों का खूब पोषण करती है और ईमान्दार व्यक्तियों और ईमान राजनीतिज्ञों का हनन करती है। क्रान्ति किसी एक के झटपटाने से संभव नहीं होगी और न ही उसका कोई फल होग। उसके लिए एकता की ज़रूरत है। संगठित होकर करने से ही अच्छा फल निकलेगा।

---

1. अमरकांत, जनमार्गी, अमरकांत की संपूर्ण कहानियाँ खंड 1, पृ. 215
2. वही, पृ. 216

अमरकांत इन कहानियों के माध्यम से प्रतिक्रिया विहीन समाज का उद्धार करना चाहते हैं। परतंत्र भारत के परिवेश को उठाकर उन्होंने गुलामी की ज़िंदगी से मुक्ति पाने के लिए तथा सामाजिक उद्धार के लिए क्रान्ति की ज़रूरत पर बल दिया है।

3.12 निष्कर्ष

पद एवं प्रतिष्ठा के भूखे राजनीतिज्ञों ने भारतीय राजनीति को खतरनाक स्थिति में पहूँचाया है। सर्वसाधारण की सुविधाओं को छीनकर यश और आराम की ज़िंदगी बितानेवाले इस वर्ग ने स्वतंत्रता के बाद भारतीय जनता को चैन की जिन्दगी जीने नहीं दिया। इन्हीं राजनीतिज्ञों ने मिलकर भारतीय राजनीति में कुटिलताएँ भर दी। सत्ता के मादक सुख और संकीर्ण स्वार्थों ने देश की व्यवस्था को तहस नहस कर दिया। स्वाधीन भारत के जन जीवन इस कुटिल राजनीति की आड में साँस लेने के लिए तडप रहा था और अब भी तडप रहा है। भारतीय जनता की उस तडप का साक्ष्य है अमरकांत की कहानियाँ।